Visit Dwarkadheeshvastu.com For
FREE Vastu Consultancy, Music, Epics, Devotional Videos
Educational Books, Educational Videos, Wallpapers
****
All Music is also available in CD format. CD Cover can also be print with your Firm Name
****
We also provide this whole Music and Data in PENDRIVE and EXTERNAL HARD DISK.
Contact : Ankit Mishra (+91-8010381364, dwarkadheeshvastu@gmail.com)

****

BILANKA RAMAYAN

(Hindi)

****

विश्वनागरी लिपि

।। ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे कथा शुभा ।।

सब भारतीय लिपियाँ सम-वैज्ञानिक हैं !

All the Indian Scripts are equally scientific !

भारतीय लिपियों की विशेषता ।

'संसार की लिपियों में नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक है', यह कथन बिलकुल ठीक है। परन्तु यह कहते समय हमें याद रखना चाहिए कि वह सर्वाधिक वैज्ञानिकता, केवल हिन्दी, मराठी, नेपाली लिखी जानेवाली लिपि में नहीं, वरन् समस्त भारतीय लिपियों मे मौजूद है। क, च, त, प आदि के रूपों में कोई वैज्ञानिकता नही है। वैज्ञानिकता है लिपि का ध्वन्यात्मक होना। स्वरों-व्यंजनों का पृथक् होना। अधिक से अधिक व्यंजनों का होना। सबको एक 'अ' के आधार पर उच्चरित करना। ['अ' अक्षर-स्वर, सकल अक्षरों का उस भाँति मूल आधार। सकल विश्व का जिस प्रकार 'भगवान्' आदि है जगदाधार।] एक अक्षर से केवल एक ध्वनि। एक ध्वनि के लिए केवल एक अक्षर। स्माल्, कैपिटल्, इटैलिक्स् के समान अनेक रूपा नहीं; बस एक ही रूप में लिखना, बोलना, छापना और प्रत्येक अक्षर का समान वज़न पर

ओड़िया - देवनागरी वर्णमाला

ଅଅ ଆଆ ଇଇ ଈଈ ଉଉ

ଊଊ ଋଋ ୠୠ ଏଏ ଐଐ

ଓଓ ଔଔ ଅଂଅଂ ଅଃଅଃ

କକ ଖଖ ଗଗ ଘଘ ଙଙ

ଚଚ ଛଛ ଜଜ ଝଝ ଞଞ

ଟଟ ଠଠ ଡଡ ଢଢ ଣଣ

ତତ ଥଥ ଦଦ ଧଧ ନନ

ପପ ଫଫ ବବ ଭଭ ମମ

ଯଯ ୟୟ ରର ଲଳ ଲଲ

ବବ ଶଶ ଷଷ ସସ ହହ

କ୍ଷ ଡ଼ ଢ଼

एकाक्षरी नाम। उच्चारण-संस्थान के अनुसार अक्षरों का कवर्ग, चवर्ग आदि में वर्गीकरण। फिर प्रत्येक वर्ग के अक्षरों का क्रम से एक ही संस्थान में थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठते हुए अनुनासिक तक पहुँचना, आदि-आदि ऐसे अनेक गुण हैं जो अभारतीय लिपियों में एकत्र, एकसाथ नहीं मिलते। किन्तु ये गुण समान रूप से सभी भारतीय लिपियों में मौजूद हैं, अतः वे सब नागरी के समान ही विश्व की अन्य लिपियों की अपेक्षा 'सर्वाधिक वैज्ञानिक' हैं। सब ब्राह्मी लिपि से उद्भूत हैं। ताड़पत्र और भोजपत्र की लिखाई तथा देश-काल-पात्र के अन्य प्रभावों के कारण विभिन्न भारतीय लिपियों के अक्षरों के रूप में यत्र-तत्र परिवर्तन, हिन्दी वाली 'नागरी लिपि' को कोई श्रेष्ठता प्रदान नहीं करता। भारत की मौलिक सब लिपियाँ 'नागरी लिपि' के समान ही श्रेष्ठ हैं।

नागरी लिपि को 'भी' अपनाना श्रेयस्कर क्यों ?

"नागरी लिपि" की केवल एक विशेषता है कि वह कमोबेश सारे देश में प्रविष्ट है, जबकि अन्य भारतीय लिपियाँ निजी क्षेत्रों तक सीमित हैं। वहीं यह भी सत्य है कि नागरी लिपि में प्रस्तुत और विशेष रूप से खड़ी बोली का साहित्य, अन्य लिपियों में प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा कम और नवीनतर है। अतः समस्त भाषाओं की ज्ञानराशि को, सर्वाधिक फैली लिपि "नागरी" में अधिक से अधिक लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से उठाकर सबको सारे राष्ट्र में, यहाँ तक कि विश्व में ले आना परम धर्म है। विश्व की सब भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान (सत्साहित्य) तो है आत्मा, और 'नागरी लिपि' होना चाहिए उसका पर्यटक शरीर।

अन्य लिपियों को बनाये रखना भी कर्तव्य है।

वस्तुतः यह परम धर्म है कि समस्त सदाचार साहित्य को नागरी में तत्परता से प्राचुर्य में लिप्यन्तरित करना। किन्तु साथ ही यह भी परम धर्म है कि देशी-विदेशी अन्य सभी लिपियों को उत्तरोत्तर उन्नति के साथ बरक़रार रखना। यह इसलिए कि सबका सब कभी लिप्यन्तरित नहीं हो सकता। अतः अन्य लिपियों के नष्ट होने और नागरी लिपि मात्र के ही रह जाने से विश्व की समस्त अ-लिप्यन्तरित ज्ञानराशि उसी प्रकार लुप्त-सुप्त होकर रह जायगी जैसे पाली, प्राकृत और अपभ्रंश, सुरयानी आदि का वाङ्मय रह गया। जगत् तो दूर, राष्ट्र का ही प्राचीन आप्तज्ञान विलुप्त हो जायगा।

नागरी लिपि वालों पर उत्तरदायित्व विशेष !

इन दोनों परम धर्मों की पूर्ति का सर्वाधिक भार नागरी लिपि वालों पर है, इसलिए कि उनको 'सम्पर्क लिपि' का श्रेष्ठ आसन प्रदत्त है। मैं कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने कर्तव्य का, जैसा चाहिए था, वैसा निर्वाह नहीं किया। परन्तु उसकी प्रतिक्रिया में अन्य लिपि वालों को भी "अपराध के जवाब में अपराध" नहीं करना चाहिए। 'कोयला' बिहार का है

अथवा सिंहभूमि का है, इसलिए हम उसको नहीं लेंगे, तो वह हमारे ही लिए घातक होगा। कोयल की क्षति नहीं होगी। अपनी लिपियों को समुन्नत रखिए, किन्तु नागरी लिपि को 'भी' अवश्य अपनाइए।

उपर्युक्त परिवेश में नागरी लिपि का पठन और समग्र श्रेष्ठ साहित्य का नागरी में लिप्यन्तरण तो आवश्यक है ही, किन्तु अन्य लिपियाँ भी अपनी लिपि में दूसरी भाषाओं के सत्साहित्य को लिप्यन्तरित तथा अनूदित कर सकती हैं। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।' ज्ञान की सीमा नहीं निर्धारित है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने भी अवधी के रामचरितमानस को ओड़िआ भाषा में गद्य एवं पद्य अनुवाद-सहित, ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरित किया है। परन्तु सम्पर्क और एकीकरण की दृष्टि से 'नागरी लिपि' अनिवार्य है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता मानव मात्र की सम्पत्ति है।

अब एक क़दम आगे बढ़िए। भारतीय लिपियों की सर्वाधिक वैज्ञानिकता, युगों की मानव-शृंखला के मस्तिष्क की उपज है। क्या मालूम इस अनादि से चल रहे जगत् में कब, क्या, किसने उत्पन्न किया? भारत संयोग से इस समय इस विज्ञान का कस्टोडियन् है, स्रष्टा नहीं। भारत भी न जाने कब, कहाँ तक और कितना था? अतः हम भारतीयों को नागरी लिपि के स्वामित्व का गर्व नहीं होना चाहिए। वह आज के मानव के पूर्वजों की देन है, सबकी सम्पत्ति है, सकल विश्व उसका समान गौरव से उपयोग कर सकता है। हमारा 'अहम्' उस लिपि की उपयोगिता को रुद्ध कर देगा, जिसके हम सँजोये रखनेवाले मात्र हैं। किन्तु विदेशों में बसने वाले बन्धुओं को भी नागरी लिपि के गुणों को अपने ही पूर्वजों की उपज मान कर परखना चाहिए। ये गुण इस निबन्ध के प्रथम अनुबन्ध में अधिकांशतः वर्णित हैं। न परखने पर, उनकी क्षति है, विश्व की क्षति है। अरब का पेट्रोल हम नहीं लेंगे, तो क्षति किसकी होगी? पेट्रोल की नहीं, अपनी ही।

फिर याद दिला देना ज़रूरी है कि क, प आदि रूपों में वैज्ञानिकता नहीं है। के, काफ़, पे और के, पी, जैसे ही रूप रख सकते हैं, किन्तु लिपि में 'अनुबन्ध प्रथम' में ऊपर दिये हुए गुणों और क्रम को अवश्य ग्रहण करें। और यदि एक बनी-बनाई चीज़ को ग्रहण करके सार्वभौम सम्पर्क में समानता और सरलता के समर्थक हों, तो 'नागरी लिपि' के क्रम को अपनी पैतृक सम्पत्ति मानकर, ग़ैर न समझकर, मौजूदा रूप में भी ग्रहण कर सकते हैं। वह भारत की बपौती नहीं है। आज के मानव के पूर्वजों की वह सृष्टि है। इससे विश्व के मानव को परस्पर समझने का मार्ग प्रशस्त होगा।

नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट स्वर-व्यञ्जनों का समावेश।

हर शुभ काम में कजी निकालनेवाले एक दूर की कौड़ी यह भी लाते हैं कि "नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक होते हुए भी अपूर्ण है और अनेक स्वर-व्यंजनों को अपने में नहीं रखती। उनको लिपि में कहाँ तक और कैसे समाविष्ट

किया जाय ?" यह मात्र तिल का ताड़ है। मौजूदा कर्तव्य को टालना है।

अलबत्ता अन्य भाषाओं में कुछ व्यंजन ऐसे हैं जो नागरी में नहीं हैं— किन्तु अधिक नहीं। भारतीय भाषा उर्दू की क़ ख़ ग़ ज़ फ़, ये पाँच ध्वनियाँ तो बहुत समय से नागरी लिपि में प्रयुक्त हो रही है। दुःख है कि आज़ादी के बाद से राष्ट्रभाषा के पक्षधर ही उनको ग़ायब करने पर लगे हैं। इसी प्रकार मराठी ळ है। इनके अतिरिक्त अरबी, इब्रानी आदि के कुछ व्यञ्जन हैं, किन्तु उनको नागरी की दैनिक लिपि में अनिवार्यतः रखना आवश्यक नहीं। विशिष्ट भाषाई कार्यों में, ज़रूरी मानकर, उन विशिष्ट भाषाई स्वर-व्यंजनों को चिह्न देकर दरसाया जा सकता है।

तदर्थ अरबी लिपि का आदर्श सम्मुख।

और यह कोई नयी बात नहीं। नितान्त अपरिवर्तनशील कहे जाने वालों की लिपि 'अरबी' में केवल २७-२८ अक्षर होते हैं। भाषा के मामले में वे भी अति उदार रहे। "इल्म चीन (अर्थात् दूर से दूर) से भी लाओ"— यह पैग़म्बर (स०) का कथन है। जब ईरान में, फ़ारसी की नई ध्वनियों च, प, ग, आदि से सामना पड़ा तो उन्होंने उनको अरबी-पोशाक— चे, पे, गाफ़ पहना दी। जब हिन्दोस्तान आये तो ट, ड, ड़ आदि से सामना पड़ने पर अरबी ही नामे में टे, डाल, ड़े आदि तैयार कर लिये। यहाँ तक कि सिन्धी में नागरी के सब महाप्राण और अनुनासिक, तथा सिन्धी के विशिष्ट अन्तःस्फुट अक्षरों को भी अरबी का लिबास पहना दिया गया। फिर 'नागरी' वाले तो औदार्य का दावा करते हैं, उनको परेशानी क्या है? और नागरी में भी तो परिवर्तन होते रहे हैं। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र में प्रयुक्त ळ को छोड़ चुके हैं, और ड़, ढ़ आदि को अवर्गीय दशा में जोड़ चुके हैं। नागरी लिपि में कुछ ही व्यंजनों का अभाव है। उनमें से कुछ को स्थायी तौर पर और कुछ को अस्थायी प्रयोग के लिए गढ़ सकते हैं। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने यह सेवा बड़ी सरलता, सफलता और सुन्दरता से की है।

स्वर और प्रयत्न (लहजा) का अन्तर।

अब रहे स्वर। जान लीजिए कि प्रमुख स्वर तीन ही हैं— अ, इ, उ— उनसे दीर्घ, संयुक्त (डिप्थांग) आदि बनते हैं। अतिदीर्घ प्लुत, लघु, अतिलघु आदि फिर अनेक हैं जो विश्व में अनेक रूपों में बोले जाते हैं। भारतीय वैदिक एवं संस्कृत व्याकरण में अनेक हैं। वे स्वतंत्र स्वर नहीं हैं, प्रयत्न हैं, लहजा हैं। वे सब न लिखे जा सकते हैं, न सब सर्वत्र बोले जा सकते हैं। डायाक्रिटिकल मार्क्स कोशों में छाप-छापकर चमत्कार भले ही दिखा दिया जाय, प्रयोग में तो, "एक ही रूप में", अपने निजी शब्द निजी देशों में भी नहीं बोले जाते। स्वर क्या, व्यंजन तक। एक शब्द "पहले" को लीजिए। सब जगह घूम आइए, देखिए उसका उच्चारण किन-किन प्रकार

से होता है। एक बिहार प्रदेश को छोड़कर कहीं भी "पहले" का शुद्ध उच्चारण सुनने को नहीं मिलेगा। पंजाब, बंगाल, मद्रास के अंग्रेजी के उद्भट विद्वान् अंग्रेजी में भाषण देते हैं—उनके लहजे (प्रयत्न) बिलकुल भिन्न होते हैं। फिर भी न उनका उपहास होता है, न अंग्रेजी भाषा का ह्रास।

शास्त्र पर व्यवहार को वरीयता (तर्जीह)।

शास्त्र और विज्ञान से हमको विरोध नहीं। लिपि की रचना, शोध, परिमार्जन, देश-काल-पात्र के अनुसार करते रहिए, परन्तु व्यवहारिकता को अवरुद्ध मत कीजिए। खाद्यपदार्थ के तत्त्वों का गुण-दोष, परिमाण, संतुलन, न्यूनाधिक्य, और खानेवाले की शक्ति के साथ उनका समन्वय, यह सब स्तुत्य है, कीजिए। किन्तु ऐसा नहीं कि उस शोध-समीक्षा के पूर्ण होने तक कोई भूखा रहकर मर ही जाय। थाली रखी है, उसे भोजन करने दीजिए। आज सबसे जरूरी है राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का एक-दूसरे की ज्ञानराशि को समझने के लिए एक सम्पर्क लिपि की व्यापकता।

'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने स्थायी और मुक़ामी तौर पर अनेक स्वर-व्यंजनों की सृष्टि की है। दक्षिणी वर्णमालाओं में एकार तथा ओकार की ह्रस्व,दीर्घ —दोनों मात्राएँ हम बोलते हैं, किन्तु पृथक् लिखते नहीं। पढ़ने दीजिए, बढ़ने दीजिए। समस्त भाषाओं के ज्ञान-भण्डार को निजी क्षेत्रों से उठाकर धरातल पर नागरी लिपि के माध्यम से पहुँचाइए। नागरी लिपि मानव के पूर्वजों की सृष्टि है, मानव मात्र की है। यहाँ से योरोप तक उसकी पहुँच है। यूरोपियों की लिपि-शैली नागरी थी। अक्षरों के रूप कुछ भी रहे हों। किन्हीं कारणों से सामीकुलों में भटककर अलफ़ा-बीटा के क्रम को थोड़े अन्तर के साथ अपना लिया। फिर पुराने संस्कारों से याद आया, तो स्वर-व्यंजन पृथक् कर दिये। किन्तु उनके क्रम-स्थान जैसे के तैसे मिले-जुले रहे। सामीकुल की भाषाओं ने भी प्रमुख स्वर तीन ही माने हैं, ज़बर-ज़ेर-पेश (अ इ उ)। ' और ' का उच्चारण अरबी, संस्कृत, अवधी और अपभ्रंश का एक जैसा है—(अई, अऊ)। किन्तु खड़ी बोली हिन्दी-उर्दू के अै, और औ, ऐनक, औरत जैसे। यह स्वरों की भिन्नता नहीं है, वरन् लहजा (प्रयत्न) की भिन्नता है।

पूर्ण वैज्ञानिक कोई वस्तु मनुष्य के पल्ले नहीं पड़ सकती। "पूर्ण विज्ञान" भगवान् का नाम है। सा-रे-ग-म-प-ध-नि, ये सात स्वर; उनमें मध्य, मन्द, तार; कुछ में तीव्र, कोमल—बस इतने में भारतीय संगीत बँधा है। उनमें भी कुछ तो अदा नहीं हो सकते, अनुभूति मात्र हैं। किन्तु क्या इतने ही स्वर हैं? संगीत के स्वरों का इनके ही बीच में अनंत विभाजन हो सकता है। जैसे अणु से परमाणु का, और उसमें भी आगे। किन्तु शास्त्र एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी। व्यवहार में उपर्युक्त षडज से निषाद तक को पकड़ में लाकर संगीत क़ायम है, क्या उसको रोककर इनके

मध्य के स्वरों को पहले तलाश कर लिया जाय ? तब तक संगीत को रोका जाय, क्योंकि वह पूर्ण नहीं है ? क्या कभी वह पूर्ण होगा ? पूर्ण तो 'ब्रह्म' ही है। "बेस्ट् इज् द ग्रेटेस्ट् अेनिमी ऑफ़ गुड्।" इसलिए शरूल और शोब्दों की आड़ न ली जाय। नागरी लिपि पर्याप्त सक्षम है।

विश्व-व्यापकता के संदर्भ में नागरी लिपि के स्वरों का रूप।

लिखने के भेद— यदि नागरी को हिन्दी क्षेत्र की ही लिपि बनाये रखना है तो इ, उ, ए, ऐ, लिखने के अपने पुरानेपन के मोह में मुग्ध रहिए। और यदि उसे राष्ट्रलिपि अथवा विश्व तक में, यहाँ तक कि सामीकुल में भी आसानी से ग्राह्य बनाना चाहते हैं तो गुजराती लिपि की भाँति अि, अु, अे, अै लिखिए। किन्तु कोई मजबूर नहीं करता। विनोबा जी ने भी इसका आग्रह नहीं रखा। आकार और रूप का मोह व्यर्थ है। पुराने ब्राह्मी-शिलालेखों को देखिए। आपके मौजूदा रूप वहाँ जैसे के तैसे कहाँ हैं ?

संस्कृत के तिरस्कार से भाषा-विघटन।

मेरा स्पष्ट मत है कि "संस्कृत" राष्ट्रभाषा होने पर, भाषा-विवाद ही न उठता। सबको ही (हिन्दी-भाषी को भी) समान श्रम से संस्कृत सीखने पर, स्पर्धा-कटुता का जन्म न होता, संस्कृत का अपार ज्ञान-भण्डार सबको प्रत्यक्ष होता, और हिन्दी की पैठ में भी प्रगति ही होती। उर्दू-हिन्दी की अपेक्षा, अन्य सभी भारतीय भाषाएँ, संस्कृत के अधिक समीप हैं। संस्कृत देश-काल-पात्र के प्रभाव से मुक्त, अव्यय (कभी न बदलने-वाली), सदाबहार भाषा है। अन्य सब भाषाएँ देश-काल-पात्र के प्रभाव से नहीं बचतीं।

आज क्या करना है ?

किन्तु अब "हिन्दी" ही राष्ट्रभाषा सबको मान्य होना चाहिए। यह इसलिए कि अन्य भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भारतीय भाषा है जो देश के हर स्थल में कमोबेश प्रविष्ट है।

सार यह कि हुज्जत कम, काम होना चाहिए। शास्त्र पर व्यवहार प्रबल है। समय बड़ा बलवान है, वह आवश्यकतानुसार ढलाई कर देता है। हिन्दी-क्षेत्र में ही घूम-घूमकर प्रतिमा-अनावरण, हिन्दी का महिमा-गान, अनुवादों की धूम, अमुक भाषा की हिन्दी को यह देन, अमुक भाषा में हिन्दी की यह छाप— यह सब दिशाविहीनता, क़िलेबन्दी और अभिमान त्यागकर, नागरी लिपि में विश्व का साहित्य लाइए। टूटी-फूटी ही सही, हिन्दी बोलना भी— ("ही" नहीं बल्कि "भी") बोलने का अभ्यास कीजिए। लिपि और भाषा की सार्थकता होगी। मानवमात्र का कल्याण होगा। हमारी एकराष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व चरितार्थ होगा।

—नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ।

एक लिपि, एक संस्कृति

[आनन्द बाजार पत्रिका, कलकत्ता, ९ फ़रवरी, १९८६ में प्रकाशित]

(श्री चित्तरञ्जन बन्द्योपाध्याय*)

भारते रोमक लिपि प्रथम प्रवर्त्तन करेछिल पोर्तुगीजरा। बांग्ला भाषाय सर्वप्रथम रोमक लिपिर व्यवहार ताराइ करे। १७४३ ख्रीष्टोब्दे आरम्भेर सात बांग्ला-पोर्तुगीज शब्द-तालिका संकलन करे मुद्रित करेन रोमक लिपिते। यतदिन देशीय भाषार हरफ निर्माणशिल्पेर उन्नति घटेनि ततदिन पर्यन्त मिशनारीरा रोमान हरफ व्यवहार करे छेन। अन्यान्य देशे, येमन आफ्रिकाय एवं येखाने समृद्ध वर्णमाला छिल ना सेखानेओ ख्रीष्टोन धर्म प्रचारेर जन्य मिशनारीरा ये सब बइपत्र छेपेछेन ताते रोमक लिपि व्यवहार करा हयेछे। इस्ट इन्डिया कोम्पानिर अधिकार यखन भारते मोटामुटिरूपे प्रतिष्ठित हय तखन अनुभूत हलये, एकटि देशेर मध्ये एत विभिन्न भाषा एवं विचित्र वर्णमाला सुष्ठु प्रशासनेर पक्षे विशेष बाधार कारण। शुधु प्रशासनिक क्षेत्रेइ ये लिपि वैचित्र्य बाधार सृष्टि करे ता नय, शिक्षा ओ संस्कृतिर क्षेत्रेओ एइ वैचित्र्य अन्तराय हये दाँड़ाय। एइ परिस्थिति उपलब्धि करे कोम्पानिर कोनो कोनो शिक्षित (देशीय) कर्मचारी ऊनविंश शताब्दी प्रथमार्धे प्रस्ताव करेछिलेन ये. भारतीय भाषार जन्य रोमक लिपि प्रचलन करा होक। एइ निये दीर्घकाल नाना बितर्क हयेछे। केउ केउ दृष्टान्त स्वरूप रोमक लिपिते किछु किछु बइपत्र छेपेओ बेर करेछिलेन। रोमक लिपि व्यवहारेर सर्वापेक्षा उल्लेखयोग्य दृष्टान्त हल दुर्गेशनन्दिनीर रोमक लिपिते लिप्यन्तर। १८८१ ख्रीष्टोब्दे पण्डित हरप्रसाद शास्त्री एवं जे, एफ० ब्राउन एइ काजटि मिलित भावे सम्पन्न करेन।† रोमक लिपिर व्यवहार स्वभाव तइ भारतीयदेर निकट

---

* १-६-८५ की बात है कि श्री चित्तरञ्जन बन्द्योपाध्याय द्वारा बँगला में लिखा एक पत्र मेरे पास आया। उन्होंने कहीं से अक्रिञ्चन् द्वारा बँगला कृत्तिवासी रामायण का पद्यानुवाद देखा और भुवन वाणी ट्रस्ट के सानुवाद लिप्यन्तरण की चर्चा सुनी। विस्तार में मेरा परिचय जानने की उन्होंने सानुरोध इच्छा प्रकट की। रचनावश मैं अपने सम्बन्ध में नहीं लिख पाया। तब नवंबर, ८५ में उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय - अध्यापिका श्रीमती तृप्ति वसु को लिखा। श्रीमती वसु ट्रस्ट-परिसर पर पधारीं, समग्र वृत्त लेकर कलकत्ता भेजा। श्री बन्द्योपाध्याय ने 'आनन्द बाजार पत्रिका (बँगला)' में एक विस्तृत लेख प्रकाशित किया। यह उसका ही नागरी लिप्यन्तरण प्रस्तुत है। हिन्दी पाठक सरलता से उसको समझ लेंगे। श्री बन्द्योपाध्याय जी का पूरा परिचय 'वाणी सरोवर' अंक जुलाई में दिया जायगा।

† शासन के चाटुकार महत्त्वाकांक्षी सदैव सभी देशों में होते आये हैं। इंगलैण्ड में भी, फ्रांस के पदाधीन रहने पर, वहाँ के समृद्ध और अधिकारी अंग्रेज ही फ्रेंच बोलने में गौरव समझते और अपनी मातृभाषा अंग्रेजी तथा अपने देशभक्त भाइयों का उपहास करते थे। किन्तु उन सामान्य देशभक्तों के बल पर ही (पृष्ठ १० पर देखें)

विशेष समादृत हयनि; केननना, वर्णमालार चित्ररूपेर संगे आमादेर सांस्कृतिक जीवनेर एकटा अविच्छेद्य सम्पर्क आछे। ताके त्याग करा सहज नय। रोमक लिपि प्रवर्तन सेइ सब क्षेत्रेइ सम्भव, येखाने समृद्ध वर्णमालार अभाव अथवा येखाने शासन ताँर निजेर क्षमतार बले जातिर उपर एटा चापिये दिते पारेन। भारतेओ पालि प्राकृत भाषार क्षेत्रे एवं किछु किछु आदिबासी अञ्चले रोमक लिपि प्रचलित हयेछिल। कामाल पाशा ताँर शासन काले रोमक लिपि चालिये छिलेन। तिनि आरबी भाषार कोरान रोमक लिपिते प्रकाश करेछिलेन, धर्मान्ध मुसलमानदेर प्रतिबाद अग्राह्य करे। रोमक लिपिर सपक्षे सब चेये बड़ युक्ति एइ ये, एते वर्णमालार सख्या ह्रास पाय। सुतरां मुद्रणेर काज अनेक सहज हये याय। ताछाड़ा द्वि-मात्रिक ओ त्रि-मात्रिक एव युक्ताक्षर इत्यादि रोमक लिपिते संख्याय कम। एइ सब कारणेइ बोध हय १९३४ सालेओ बांग्ला देशेर अध्यापकदेर एकांश बांग्ला वर्णमालार परिवर्ते रोमक लिपि द्वारा बांग्ला बइपत्र मुद्रणेर प्रस्ताव एनेछिलेन। एइ शतकेर त्रिशेर दशके एक बार कंग्रेस अधिबेशने प्रस्ताव उठेछिल ये, हिन्दुस्तानी भारतेर राष्ट्रभाषा होक क्षति नेइ, किन्तु तार बाहन येन हय रोमक लिपि। बर्तमान शतकेर मध्यभाग पर्यन्त रोमक लिपि प्रचारेर सपक्षे किछु किछु काज हयेछे। आचार्य सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय एक समय रोमक लिपिर पक्षपाती छिलेन§। तिनि बलेछेन, "भारतेर समस्त भाषा रोमान पक्षरे लिखिबार एकटि प्रस्ताव बहुकाल धरिया चलिया आसितेछे। एइ प्रस्तावटि आपात दृष्टिते एमनइ अनावश्यक एवं जातीयता बिरोधी ये, आमादेर देशे प्राय सकलेइ एइ प्रस्ताव उल्लापन-मात्रेइ ताहा जातीयता बोध बर्जित पागलेर प्रलाप बलिया "पत्रपाठ" बर्जन करिया बसेन;" तरे चिन्ताशील व्यक्तिरा अनेकेइ मने करतेन ये, भारतेर लिपि बैचित्र्य एक जातीयता बोधेर परिपन्थी। रोमक लिपि सुबिधाजनक हलेओ कये कटि कारणे ता ग्रहण योग्य मने हयनि। बिशेषत यखन स्वाधीनतार जन्य आन्दोलन शुरु हल तखन देशीय लिपिर परिवर्ते बिदेशी लिपि ग्रहण करबार कथा मेने नेओया कठिन छिल। रोमक लिपिर परिबर्ते प्रस्ताव एल देवनागरी लिपि ग्रहण कर बार। एइ प्रस्ताव कार्ये रूप देबार जन्य प्रथम उद्योगी हयेछिलेन कलिकाता हाइकोर्टेर बिचारपति,

---

(पेज ९ से) आगे चलकर वह उपहासास्पद गँवारू अंग्रेजी भाषा विश्व की व्यापक खिचड़ी भाषा बन गई। भारतीय भाषाएँ तो परम वैज्ञानिक और अति समृद्ध हैं।

§ पहले ये हिन्दी ही के बड़े पक्षधर थे। बाद में, विरोध में आकर रोमन का पक्ष ग्रहण किया।

—नन्दकुमार अवस्थी
सम्पादक, वाणी सरोवर

शिक्षानुरागी एवं सुलेखक सारदाचरण मित्र (१८४८-१९१७)। ताँर उद्योग एवं अर्थानुकूल्य कलकाताय स्थापित हल एक-लिपि-बिस्तार परिषत् वर्तमान शतकेर गोड़ार दिके। एइ परिषदेर मुखपत्र छिल "देवनागर"। स्वल्पजीवी एइ सामयिक पत्रे बांग्ला, उड़िया, माराठी, गुजराती, तामिळ, तेलुगु, प्रभृति भाषार रचना देवनागरी लिपिते, लिप्यन्तर करे मुद्रित हत।

सारदाचरणेर एइ उद्योग सेदिन शिक्षित समाजेर निकट विशेष प्रेरणा लाभ करेनि। सारदाचरण एकलिपि बिस्तारेर ये काज आरम्भ करेछिलेन बांग्ला देशे केउ ताके साफल्य मण्डित करबार जन्य उद्योगी हननि। किन्तु कयेक बछर यावत् लक्ष्नौ (लखनऊ) शहरे ताँर आदर्शके रूपायित करबार जन्य एक बिराट कर्मयज्ञेर सूत्रपात हयेछे। एइ कर्मयज्ञेर पुरोहित पंडित नन्दकुमार अभ्यारंभी। तिनि तामिळ कवि सुब्रह्मण्य भारतीर काव्य संकलनेर देवनागरी संस्करणेर भूमिकाय सारदाचरणेर उद्यमेर ये उच्छ्वसित प्रशंसा करेछेन ता आमादेर विशेष प्रणिधानेर कारण। लक्ष्नौवासी

जस्टिस सारदाचरण मित्र

नन्दकुमारेर जन्म २ (मई) १९०७ खीष्टाब्दे। कर्मजीवन आरम्भ हय रेलओये संक्रान्त चाकरि दिये। कलकाताय तिनि चाकरि करे छेन कयेक छर; शेष राखे कयेकटि। छोटखाट हिन्दी सामयिक पत्रिकारओ सम्पादना करेछेन। साहित्य-चर्चा एवं समाजसेवा छिल ताँर काछे अत्यन्त प्रिय। आपिसेर परिवेश एदेर बिरोधी छिल बले तिनि चाकरि त्याग करे लक्ष्नौ चले आसेन। सेखानकार नओलकिशोर प्रेसेर काजे योग देन एवं दीर्घ कुड़ि बछर शेष प्रेसेर संगे युक्त छिलेन। एइ अभिज्ञता ताँर परवर्ती जीवनेर काजे विशेष सहायक हयेछे। नन्दकुमारजीर साहित्य चर्चार मूले आछे ताँर बांग्ला साहित्येर प्रति अनुराग। कलकाताय अवस्थान कालेइ तिनि बांग्ला शिखेछिलेन एवं कृत्तिवासेर रामायण पड़ते आरम्भ करेन। ए छाड़ा आर यांदेर रचनावली ताँके प्रभावान्वित करे छिल ताँदेर मध्ये विशेष रूपे उल्लेख योग्य बंकिमचन्द्र ओ रबीन्द्रनाथ। राजनीतिर क्षेत्रेओ एकजन बाङ्गाली छिलेन ताँर गुरु स्थानीय— योगेशचन्द्र चट्टोपाध्याय*। जीवने

* मेरे नहीं, मेरे कनिष्ठ भ्राता सम्प्रति आयुर्वेदाचार्य कविराज (देखें पृष्ठ १२ पर)

तिनि नाना दुःख कष्ट भोग करे छेन, किन्तु साहित्य चर्चार आदर्श थेके कखनो विच्युत हननि। तिनि आदर्शवादी साहित्यसेवी, सुतरां एकटा विशेष लक्ष्य सामने रेखे साहित्य साधनार काजे अग्रसर हये छेन। स्वाधीनतार परे भारतेर भाषा समस्यार प्रति तांर दृष्टि आकृष्ट हय। तांर मने हयेछिल स्वाधीनतार माध्यमे ये राजनैतिक ऐक्य बोध समग्र देशके एकसूत्रे ग्रथित करेछे ता दृढ़तर हरे यदि संस्कृतिगत ऐक्य आना याय। सांस्कृतिक ऐक्येर प्रधान बाधा एत विभिन्न भाषा एवं विभिन्न वर्णमाला। भारते वेश कये कटि भाषा रयेछे यारा विशेष रूपे समृद्ध एवं तादेर साहित्य ओ गौरवोज्ज्वल। एदेर निज निज एलाकाय पूर्ण विकाशेर सुयोग करे दिते हरे। ता छाड़ा सांस्कृतिक ऐक्येर जन्य आर एकटि जरूरी काज हल विभिन्न आञ्चलिक साहित्येर श्रेष्ठ ग्रन्थराशि देवनागरीते लिप्यन्तर करे समग्र देशे तादेर प्रचारेर सुयोग करे देओया। एकाजेर मध्य दियेइ सांस्कृतिक मिलनेर भित्ति दृढ़ हते पारे। देवनागर लिपिर मध्यमे समग्र देशके मिलनेर सूत्रे बँधे देओयार प्रेरणा तिनि लाभ करेछिलेन सारदाचरण मित्रेर एक-लिपि-विस्तारेर उद्योग थेके। नन्दकुमार जी देवनागरे आञ्चलिक भाषार श्रेष्ठ रचना गुलि लिप्यन्तरेर परिकल्पना ग्रहण करेछिलेन एइ कारणे ये, देवनागर अन्यान्य ये कोन आञ्चलिक वर्णमाला अपेक्षा अधिक परिचित। हिन्दी साहित्य सर्वश्रेष्ठ एमन संकीर्ण मनोभाव तांर नेइ। वरं तिनि बलेछेन संस्कृत भारतेर राष्ट्रभाषा हले अन्यान्य भाषाभाषीरा निजेदेर द्वितीय श्रेणीर नागरिक बले मने करत ना। एमन कि, तिनि बलेछेन संस्कृत आन्तर्जातिक भाषा हिसाबे स्वीकृति पाबार योग्य। नन्दकुमार अबोयास्थी जी तांर आदर्श सुष्ठुरूपे रूपायणेर जन्य १९६९ साले भुवन वाणी ट्रस्ट स्थापन करेन। तांर आदर्शेर मूल कथा हल : प्रत्येक आञ्चलिक साहित्य निजस्व लिपि व्यवहार करे विकाश लाभ करबे। शुधु भारतेर नय, पृथिबीर सकल देशेर साहित्य सम्बन्धेओ एकथा प्रयोज्य। किन्तु एक साहित्येर सम्पद येन शुधु भाषार प्राचीन अन्य भाषाभाषीदेर काछ थेके दूरे ना राखे। ताहले सेटा हबे सभ्यता ओ संस्कृति विस्तारेर पक्षे अन्तराय। अबोयास्थी जी विश्वास करेन प्रत्येक भाषार श्रेष्ठ ग्रन्थ समूह देवनागरीते लिप्यन्तर ओ हिन्दीते अनुवाद हले मानव-समाजेर महत् चिन्ता-धारा भाषार गन्ति अतिक्रम करे विश्वमय छड़िये पड़बे। ताइ तिनि तांर ट्रास्टेर नामकरण करे छेन भुवन बाणी, भारत बाणी नय। नाना

(पृष्ठ ११ से) वि० कृष्णकुमार अबस्थी के गुरु थे। मेरे सुहृद् थे। सन् १९४२ के स्वतंत्रता-संग्राम के समय स्व० योगेश दादा तथा अन्य अनेक कर्मठ क्रान्तिकारी हमारे परिवार में महीनों निवास करते थे। —नन्दकुमार अबस्थी

कारणे देवनागरी लिपि नाना अञ्चले बिस्तार लाभ करेछे। सुतरां एइ लिपि केइ तिनि संस्कृति बिस्तारेर बिश्वसेतु हिसारे ग्रहण करे छेन। आसले तिनि मने करेन प्रत्येक भाषार बर्णमालाइ बिज्ञान भित्तिक एवं महत् साहित्य रचनार उपयुक्त बाहन। ट्रास्ट स्थापनेर अनेक आगे थेकेइ अओयास्थी जी ताँर काज आरम्भ करे दियेछिलेन। ताँर प्रथम काज कोरान शरीफेर नागरीते लिप्यन्तर ओ हिन्दी अनुबाद। १९४७ साले एइ काज शुरु हय। बइ छेपे बेरुते समय लागे कुड़ि बछर। नाना बाधा विघ्न अतिक्रम करे एकक चेष्टाय तिनि शेष पर्यन्त सफल हन। मुसलमान सम्प्रदाय आरबी धर्मग्रन्थेर लिप्यन्तर ग्रहण करबे। किना ता निये मने सर्वदाइ सन्देह छिल। किन्तु एखन सन्देह अमूलक बले प्रमाणित हयेछे। आरबी भाषार पण्डितरा नागरी लिप्यन्तर ओ हिन्दी अनुबादेर भूयसी प्रशंसा करे छेन। रयेल आकारेर १०२४ पृष्ठार बइयेर दाम मात्र ५२ टाका। एइ बइयेर क्रेता हिन्दु-मुसलमान उभय सम्प्रदायेर पाठक। सब चेये बेशि बिक्रि एइ बइटिर। एखन चलजे सप्तम संस्करण। द्वितीय ग्रन्थ कृत्तिबासी रामायण। अनुबाद ओ लिप्यन्तरेर काज शुरू हये छिल १९२८-१९३० साले। अओयास्थी जी यखन कलकाताय छिलेन तखन थेकेइ कृत्तिबासी रामायणेर प्रति आकृष्ट हन। १९१६ एवं तार परेओ अवश्य कृत्तिबासेर रामायणेर दुतिनटि काण्ड हिन्दीते अनुबाद हयेछे। किन्तु अयोयास्थी जीइ एके एके सातटि काण्ड अनुबाद करे प्रकाश करे छेन। तिनि दिये छेन नागरी लिप्यन्तर। हिन्दी गद्यानुबाद एवं तुलसीदासेर अनुकरणे दोहाचौपदी छन्दे अओयास्थी जी निजेइ पद्यानुबाद करे छेन। हिन्दी भाषीदेर तिनि कृत्तिबासी रामायण पड़ते बले छेन तिनटि कारणे: प्रथमत, कृत्तिबास बांग्लार आदिकबि बले कथित; द्वितीयत, तिनि तुलसीदास गोस्वामीर रामचरितमानस रचनार प्राय एकशत बत्सर पूर्बे राम-कथा आञ्चलिक भाषाय कि भावे रूपान्तरित करेन तार निदर्शन एइ रामायण। तृतीयत, बांग्ला भाषा संस्कृत शब्द बहुल सुतरां लिप्यन्तर पाठे कृत्तिबासेर मूल रचनार रस अनेकटाइ आस्वादन करा येते पारबे। एर परे तिनि ये बइटिर लिप्यन्तर ओ अनुबाद करेन सेटि हल तिरुबाल्लुबार रचित दुहाजार बछरेर प्राचीन ग्रन्थ तिरुक्कुरल। तामिल भाषीदेर निकट एटि अवश्य पाठ्य नीतिशास्त्र बिषयक धर्मग्रन्थ। लिप्यन्तर छाड़ा देओया हयेछे हिन्दी गद्य ओ पद्यानुबाद। भूमिकाय एइ ग्रन्थ सम्बन्धे बिशद आलोचना आछे। चतुर्थ पुस्तिटि तामिल भाषार प्रसिद्ध कबि सुब्रह्मण्य भारतीर काव्य-संग्रहेर लिप्यन्तर ओ हिन्दी ते गद्य ओ पद्यानुबाद। भूमिकाय कबिर विस्तृत परिचय देओया हयेछे। ११७६ पृष्ठार बिराट ग्रन्थेर मूल्य १०० टाका। भूषण बाणी ट्रास्टर ग्रन्थ-तालिका थेके देखा याय उतिमध्ये ताँरा ६१ खानि

अन्य भाषार बइ देवनागरीते लिप्यन्तर ओ हिन्दी अनुवाद करे प्रकाश करे छेन। एइ सब भाषार मध्ये आछे : असमीया, आरबी, ऊर्दू, ओड़िया, कन्नड, काश्मीरी, गुजराती, गुरुमुखी, ग्रीक, तमिळ, तेलुगु, नेपाली, फारसी, बांग्ला, मराठी, मालयालम, मैथिली, राजस्थानी, संस्कृत, सिन्धी, हिब्रू, (यूनानी, अरामी)—मोट २३टि भाषा। एइ तालिका थेके एकटि जिनिस लक्ष्यणीय ये अओयास्थी जी द्रुत बइ बिक्रिर लोभे जनप्रिय कथा-साहित्यिकदेर रचना लिप्यन्तर करेननि। बिभिन्न भाषार मूल संस्कृति धाराके प्रचार करबार आदर्श सामने रेखेइ तिनि काज करे चले छेन। एइ काजटि ये कत प्रयोजनीय ता उपलब्धि करा याय यखन देखि ताँर लिप्यन्तर ओ हिन्दी अनुबादेर तालिकाय आञ्चलिक भाषाय राम-कथार अन्तत १८टि रूपान्तर स्थान पेयेछे। काश्मीर थेके आसाम, दक्षिण-भारत, पूर्व ओ पश्चिम भारते रामायण ये किभावे नाना रूप ग्रहण करेछे ता अध्ययनेर जन्य एइ लिप्यन्तर ओ अनुवाद बिशेष प्रयोजनीय। भुवन वाणी ट्रास्टर हाते एखन रयेछे बिभिन्न भाषार ५७-५८टि बइ प्रस्तुतिर नाना पर्याये। एजाड़ा ताँरा वाणी-सरोवर नामे एकटि सामयिक पत्र प्रकाश कर छेन। बला बाहुल्य, एइ पत्रिका ट्रास्टर आदर्श प्रचारेर मुखपत्र हिसारे काज करछे। एइ प्रसंसे बला प्रयोजन ये, भुवन बाणीर आर एकटि परिकल्पना आछे। ता हल बिश्व-भाषा मन्दिर प्रतिष्ठा। ए मन्दिरे कोन बिग्रह थाकरे ना। मन्दिरेर प्रत्येकटि प्रस्तर फलके उत्कीर्ण थाकरे बिश्वेर प्रधान प्रधान भाषार बर्णमाला एवं सेइसब भाषा थेके उपयुक्त उद्धृति। बिश्वभाषा प्रेमिक अयोयास्थी जी ८० बछर पा दिते चले छेन। किन्तु तरुणेर आशा ओ उत्साह निये तिनि भुवन वाणीर कारजे एगिये चले छेन। ताँर सब चेये बड़ कृतित्व तिनि आञ्चलिक भाषार अनेक पण्डितके निजेर काजेर संगे युक्त करते पेरे छेन। एँदेर सकलेर सक्रिय सहयोगिता ताँ के सफलतार पथे एगिये निये चले छे। तरे अर्थाभावे प्रचार करते ना पाराय ट्रास्टर बइएर बिक्रि आशानुरूप नय। व्यक्तिगत क्रेताइ बेशि। सरकारी साहाय्यपुष्ट हले काज हयतो आर ओ सुष्ठु भावे चलत। संस्कृत साहित्येर क्षेत्रे लिप्यन्तर प्रथा बांग्लाय पुथिर युग थेकेइ प्रचलित आछे। एर फले ग्रन्थटि पाठकेर निकट सहज पाठ्य हय। अओयास्थी जीर मत कोन उद्योगी व्यक्ति यदि हिन्दी, मराठी, गुजराती, ओड़िया, असमीया प्रभृति भाषार श्रेष्ठ ग्रन्थावली बंगाक्षरे लिप्यन्तर करेन तरे बाङ्गाली पाठकेर निकट ता सहज बोध्य हते पारे।

भुवन वाणी ट्रस्ट सम्बन्धे अनेक तथ्य संग्रह करे दिये छेन लक्ष्नौ विश्वविद्यालय-अध्यापिका श्रीमती तृप्ति बसु —चित्तरञ्जन बन्द्योपाध्याय।

अनुवादकीय

उड़ीसा-वास के समय मैं जिन उड़िया ग्रन्थों के प्रति आकर्षित हुआ उनमें बिलंका रामायण भी एक थी। विश्राम के क्षणों में हमारे बगीचे से बहुधा सरस पदावली सुनकर मैं मुग्ध हो जाया करता। हमारा माली बड़े लय के साथ लगभग नित्य ही गेय पदों को गाया करता था। एक दिन मैंने उससे पुस्तक ले ली और पढ़ने बैठ गया। मुझे बड़ा आनन्द आया। हमारे पारिवारिक जनों ने इस नये कथानक को बड़े ध्यान से सुना। इस ग्रन्थ को मैंने कई बार आद्योपान्त पढ़ा। हमारे मित्रों ने भी इसका आनन्द लिया। अन्ततः अपने इस्पात कारखाने के अति व्यस्त जीवन में भी मैंने इसके अनुवाद का कार्य प्रारम्भ कर दिया। इस नये कथानक ने हिन्दी-जगत को चमत्कृत कर दिया।

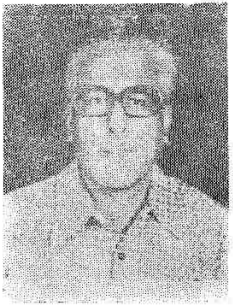

योगेश्वर त्रिपाठी 'योगी'

उड़िया भाषा का सत्साहित्य बहुत ही सरल और सरस है। बिलंका रामायण तो उड़ीसा के ग्रामीण अंचलों से लेकर नगर के साहित्यिक जनों को प्रभावित करती रही है। इसकी भाषा सरल व बोधगम्य होते हुए माधुर्य गुण से अनुप्राणित है। इस ग्रन्थ के मूल लेखक भक्त कवि शारलादास जी हैं। इनकी महाभारत भी उड़ीसा में विशेषतः ग्रामीण अंचलों में जनप्रिय रही है। अपने पाठकों को ग्रन्थकार के विषय में कतिपय जानकारी करा देना आवश्यक समझता हूँ। शारलादास उड़िया साहित्य के सर्वप्रथम कवि हैं। उनके जीवन से सम्बन्धित अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। अन्तर्साक्ष्य के आधार पर यह सिद्ध होता है कि वह श्री जगन्नाथपुरी के महाराज गजपति गौड़ेश्वर कपिलेन्द्रदेव (सन् १४५२ ई० से १४७९ ई०) के समकालीन थे।

"प्रणपत्ये खटइ कपिलेन्द्र नामे राजा।
तेत्रिश कोटि देवे चरणे जार पूजा॥"

बचपन में उनका नाम सिद्धेश्वर तथा चक्रधर परिड़ा था। बिलंका रामायण के रचनाकाल तक उनके ये ही नाम प्रचलित थे।

"रामायण वृत्तांतकु निरंतरे घोष।
श्रीराम चरणे भजे सिद्धेश्वर दास॥

× × ×

बइकुण्ठे जाइ बिष्णु आश्रारे रहइ।
चक्रधर श्री अच्युत पयर भजइ॥"

—वि० रामायण

परवर्ती काल में उनकी इष्टदेवी, जो "शंकड़वासनी" नाम से आज भी पूजित हैं, उन पर प्रसन्न हुईं। उन्हें सिद्धि प्राप्त हुई। उन्होंने अपने को शारलादेवी के अनन्य उपासक के रूप में परिचित करा कर अपना नाम शारलादास रखा।

"जगन्माता जहुँ प्रसन्न मोते हेले।
शूद्रमुनि शारलादास नाम मोते देले॥"

—आश्रमिक पर्व

शारलादास जी बचपन से ही मातृ-पितृ-सुख से वंचित रहे। उनका बाल्यजीवन उनके बड़े भाई परशुराम जी के आश्रय में व्यतीत हुआ था।

"कनकपुर पाटणा घर पर्शुराम।
मुहिं तार अनुज शारलादास नाम॥"

—मध्य पर्व

उड़ीसा के आधुनिक "कटक" जिले में चित्रोत्पला नदी के किनारे स्थित "जंखरपुर पाटणा" इलाके के शारोल गाँव में उनका जन्म हुआ था, ऐसा बताया जाता है। परन्तु शारलादेवी के मन्दिर के समीपवर्ती "कालीनाभ" गाँव के पक्ष में किंवदन्ती अधिक है। शारलादास शक्ति के उपासक शाक्त थे। उनके पूर्वज शारलापीठ के परम्परागत पूजक थे। उनकी वंश-परम्परा ब्राह्मणतर थी, क्योंकि उस समय ब्राह्मणेतर लोग ही देवी पूजा का कार्य करते थे। सम्भवतः उनकी उपजाति का नाम "मुनि" था जो अवैदिक शूद्र था। अतएव शारला जी ने अपना परिचय बार-बार "शूद्रमुनि" के नाम से दिया है। उन्होंने यह भी कहा है कि वह न पण्डित हैं और न पढ़े-लिखे। शारला की कृपा से ही वह उनकी महिमा गाते हैं।

शारलादास जी का "महाभारत" संस्कृत महाभारत का अनुवाद नहीं है। उसी प्रकार उनकी अन्य कृतियाँ—बिलंका रामायण तथा चण्डी पुराण भी अनूदित ग्रन्थ नहीं हैं। कथानक और भावपक्ष दोनों ही पूर्णतः मौलिक हैं। शैलीगत नवीनता तो है ही। उनकी कुछ पंक्तियाँ सामान्य जनता के कण्ठ में बहुप्रचलित लोकोक्तियों तथा कहावतों का रूप ले चुकी हैं।

१ झिमिटि खेलरु महाभारत।

२ कोकुआ भय ।
३ गंगा कहिले बिबि-गांगी कहिले जिबि ।
४ पहिले जुद्धरे भीम हारे ।

बिलंका रामायण और महाभारत का छन्द "दाण्डी-वृत्त" कहलाता है। प्रस्तुत छन्द के आदिप्रवर्तक स्वयं शारलादास हैं। पंक्तियों की वर्ण-संख्या का बराबर न होना उसका प्रमुख लक्षण है। वार्णिक तथा तुकान्त तो है परन्तु चरणों की वर्ण संख्या नौ से बत्तीस तक बढ़ भी जाती है। यथा—

"खड्ग से बर जे नोहिला सन्तति।
समुद्रकुलरे राये नित्य आसिथिला नग्रकु समुद्र दश जोजने परिजन्ति ॥"

उन्होंने स्थानीय जीवन का यथार्थ वर्णन दिया है। द्रौपदी और हिडिम्बा के प्रसंग में उड़िया नारी स्पष्टतः चित्रित है। उनकी रचनाएँ उड़िया जन-जीवन के अमर आलेख्य हैं।

अपने कार्यक्षेत्र से परिस्थितिवश मुझे कानपुर आ जाना पड़ा। पुस्तकालय के साथ ही साहित्यिक साधना भी चलती रही। "तपस्विनी" तो प्रकाशित हो चुकी थी। पर बिलंका रामायण अभी मुझ तक ही सीमित थी। मेरी इच्छा होती थी कि जैसे भी हो यह ग्रन्थ हिन्दी जगत में आना ही चाहिए। भाग्यवश मान्यवर पं० नन्दकुमार जी अवस्थी से भेंट हो गई। अवस्थी जी ने भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ के माध्यम से इस ग्रन्थ को हिन्दी-जगत में लाने की मुझे प्रेरणा दी! मैंने ट्रस्ट के लिए इस ग्रन्थ को हिन्दी में लिप्यन्तरण-सहित अनूदित किया। पूज्य अवस्थी जी की प्रेरणा एवं सौजन्य के फलस्वरूप मूल उड़िया काव्य का नागरी लिप्यन्तरण सहित भाषानुवाद आपके हाथों में आया। मैं समझ नहीं पा रहा कि उनका आभार किन शब्दों में प्रकट करूँ। शारलादास के जीवन-परिचय के लिए मैं अपने स्नेही बन्धु डॉ० अर्जुन सत्पथी, एम० ए०, पी० एच० डी, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, सरकारी कालेज राउरकेला (उड़ीसा) का आभारी हूँ। जिन अन्य सहयोगियों ने मुझे इस कार्य में सहायता दी है, उनका मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

"शंकर सदन"
१७/१३, माल रोड, कानपुर— १
कार्तिक पूर्णिमा
सन् १९८४

विनीत
योगेश्वर त्रिपाठी "योगी"

भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा ओड़िआ भाषा की सेवा एवं विद्वान अनुवादक का परिचय

भारत के विश्रुत चार सांस्कृतिक पीठस्थानों में पूर्वाञ्चलीय श्रीजगन्नाथ पुरी की पुष्कल प्रेरणा, अथवा संयोग, कि अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा ओड़िआ भाषा की सेवा कुछ अधिक आकर्षक बन पड़ी। सर्वप्रथम अद्वितीय अलंकारमय काव्य 'बैदेहीश-विलास' का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण, ओड़िसा प्रदेश के सर्वप्रथम हिन्दी के एम० ए० स्नातक श्री सुरेशचन्द्र नन्द के श्रम के फलस्वरूप प्रकाशित हुआ। दूसरी विशेषता यह कि हिन्दी के मुकुट ग्रन्थ रामचरितमानस का ओड़िआ लिपि में रूपान्तर, तथा ओड़िआ भाषा में गद्य-पद्य अनुवाद। इसके बाद श्री नन्द अधिक व्यस्त हो गये।

भगवान की कृपा हुई कि भुवन वाणी ट्रस्ट के क्षितिज में नव नक्षत्र का उदय हुआ। समीप ही कानपुर में श्री योगेश्वर त्रिपाठी 'योगी' सम्पर्क में आये। "सृष्टि-उदय पर, सदा व्योम में, जगते यथा वेद के मंत्र! 'विश्वनागरी' से उगते त्यों सुवन-सरस्वति स्वतः स्वतंत्र!" श्री योगी जी, बी० ए०, साहित्यरत्न; जन्म-तिथि— १५ अप्रैल, १९३५ ई०; जन्म-स्थल— महोबा (जि० हमीरपुर) मातुलग्रह में; निवास— १७/१३, शंकर-सदन, माल रोड, कानपुर—२०८००१; १९५७ से १९५८ तक जमशेदपुर (टाटा आइरन ऐण्ड स्टील कम्पनी) के साथ कार्यरत; १९५९ से १९८२ तक राउरकेला (उड़ीसा) में स्टील आफ़ इण्डिया में कार्यरत; साहित्यिक अभिरुचि के फलस्वरूप ओड़िआ भाषा का ज्ञान; अनूदित ग्रन्थ (१) तपस्विनी— स्व० गंगाधर मेहेर; (२) प्रणय वल्लरी— स्व० गंगाधर मेहेर; (३) बन्दीर आत्मकथा— स्व० उत्कलमणि गोपबन्धुदास; (४) कालिआर करामति— श्री लक्ष्मीधर महापात्र; (५) नीलाद्रीश चौतीसा— कवि सम्राट् उपेन्द्र भंज; (६) बिलंका रामायण— स्व० श्री सारलादास। तथा मौलिक कृतियाँ— (१) साक्षीगोपाल; (२) कांची विजय; (३) जगन्नाथ-दर्शन; (४) मानस चन्द्रिका। यह श्री योगी जी का जीवन वृत्त है। वे हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, बंगला, ओड़िआ भाषाओं के विद्वान हैं।

उनके योगदान से ओड़िआ की बिलंका रामायण का सानुवाद लिप्यन्तरण पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। विचित्र रामायण छप रही है और अति विशाल बलरामदास कृत दाण्डी जगमोहन रामायण का हिन्दी अनुवाद तथा नागरी लिप्यन्तरण किया जा रहा है।

—नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

प्रकाशकीय

भुवन वाणी ट्रस्ट के नवनिर्मित 'विश्वभाषा सेतु संस्थान' के विशाल अवलोकनीय परिसर पर सारा कामकाज आ जाने के बाद, बिलंका रामायण' हमारा प्रथम प्रकाशन प्रस्तुत है।

पृष्ठ ३-८ पर विश्वनागरी लिपि तथा हमारा दृष्टिकोण; पृष्ठ १५-१७ पर सानुवाद लिप्यन्तरणकार का परिचय; पृष्ठ १८ पर ओड़िआ भाषा की सेवा का विवरण; और पृष्ठ ९-१४ पर सम्प्रति देश के १०-१५ विद्वानों में गण्यमान्य श्रीचित्तरञ्जन बन्द्योपाध्याय का आनन्द बाज़ार पत्रिका, कलकत्ता, ९ फ़रवरी, १९८६ के अंक में प्रकाशित 'एक लिपि, एक संस्कृति' लेख पठनीय है। तदर्थ हम श्रीबन्द्योपाध्याय के ऋणी हैं।

'देश के समस्त भाषाओं के प्रचुर वाङ्मय को नागरी लिपि में लाया जाय', १९०५ ई० में इसके मंत्रद्रष्टा और देवनागर के सम्पादक, जस्टिस् सारदाचरण मित्र का चित्र जो अनुपलब्ध था, वह किसी प्रकार से उनकी ही खोज के फलस्वरूप पाठकों के दर्शनार्थ पृष्ठ ११ पर हम प्रस्तुत करके अपने को धन्य मान रहे हैं।

उड़िया लिपि—उड़ीसा में प्रयुक्त वह लिपि पुरानी नागरी की पूर्वी शैली से विकसित हुई है, पर इस पर दक्षिण की तेलुगु तथा तमिळ लिपियों का प्रभाव पड़ा है और इसी कारण बड़ी कठिन हो गयी है। कुछ लोग इसे पुरानी बँगला लिपि से तथा कुछ लोग 'कुटिल' (दे० बँगला लिपि) से निकली मानते हैं। इसके दो रूप 'करनी' तथा 'ब्राह्मणी' नाम से प्रसिद्ध हैं। ब्राह्मणी ताड़पत्रों पर लिखने में प्रयुक्त होती रही है और करनी कागज पर। गंजाम ज़िले में उड़िया का एक और रूप मिलता है जिसके अक्षर अपेक्षाकृत और भी वर्तुलाकार हैं। लोगों का अनुमान है कि तालपत्र पर लौह लेखनी से सीधी रेखा बनाने से तालपत्र के कट जाने का डर था, इसी कारण यह लिपि वर्तुलाकार हो गयी। इस लिपि का विकास ११वीं सदी के आसपास हुआ। (संदर्भ—भाषा विज्ञान कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी)।

आभार-प्रदर्शन।

सर्वप्रथम हम श्री योगेश्वर त्रिपाठी 'योगी' के कृतज्ञ हैं, जिन्होंने निस्पृह भाव से ट्रस्ट के अनुरोध पर बिलंका रामायण के अनुवाद और

लिप्यन्तरण को राष्ट्रहित में अति श्रम एवं तत्परता से ग्रहण किया, वहन किया। सर्वाधिक श्रेय उन्हीं को है।

सदाशय श्रीमानों और उत्तर प्रदेश शासन के प्रति भी हम आभारी हैं, जिनकी अनवरत सहायता से 'भाषाई सेतुकरण' के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन चलता रहता है।

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि 'नागरी' के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी उल्लेखनीय सहायता से हमको विशेष बल मिला है और उपर्युक्त सबके फलस्वरूप ओड़िआ का यह अद्भुत ग्रन्थ प्रस्तुत वर्ष में प्रकाशित हो सका।

विदित हो—

विदित हो कि पुत्र-जन्म पर उसका नाम लखपति साह रख देने से वह लखपती नहीं बन सकता, वह दस-बीस लाख का स्वामित्व पाकर ही लक्षाधीश चरितार्थ होगा। राष्ट्रभाषा की स्थापना तो हो गई परन्तु अभी वह इस रूप में चरितार्थ तो नहीं हुई। भारत में अधिक फैली होने ही के एक मात्र कारण से, प्रचलित हिन्दी (खड़ी बोली) को, राष्ट्रभाषा और परम वैज्ञानिक भारतीय लिपियों में से सर्वाधिक प्रसरित लिपि 'नागरी' को उनकी प्रतिनिधिस्वरूपा होकर राष्ट्र का एकात्मभाव सदैव की भाँति दृढ़ बनाये रखने के लिए, सेवा सौंपी गई। अतः प्रथम कर्तव्य है राष्ट्रलिपि और राष्ट्रभाषा को न केवल भारतीय वरन् विश्व के वाङ्मय के सानुवाद लिप्यन्तरण द्वारा भर दिया जाय, लखपति साह को वस्तुतः लक्षाधीश बना दिया जाय।

> विश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
> पहन नागरी-पट सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा॥
> अमर भारती सलिलमञ्जु को 'ओड़िआ' पावन धारा।
> पहन नागरी पट, 'सुदेबि' ने भूतल-भ्रमण विचारा॥'

दिनांक २६-३-१९८६

—नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)
मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-२०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
विश्वनागरी लिपि	३-८
एक लिपि-एक संस्कृति	९-१४
अनुवादकीय	१५-१७
भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा ओड़िया भाषा की सेवा एवं अनुवादक विद्वान का परिचय	१८
प्रकाशकीय	१९-२०
विषय-सूची	२१-२३

पूर्व-खण्ड — २५-३२५

१	देवी-देवताओं की वन्दना।	२६
२	शिव-पार्वती का रामायण-चरित-विषयक कथोपकथन तथा रामचन्द्र का अयोध्या-आगमन।	२८
३	हनुमान का बिलंका-गमन और विष-पान से उनकी मृत्यु एवं पवन द्वारा पुनः जीवन की प्राप्ति।	६१
४	हनुमान-श्रीराम-मिलन एवं सहस्रशिरा रावण के गर्भ में फँसे हनुमान द्वारा श्रीराम का स्मरण।	७६
५	हनुमान और सहस्रशिरा रावण का संवाद एवं हनुमान के साथ सप्तशिरा मंत्री का युद्ध तथा राम के हाथ से सप्तशिरा की मृत्यु।	८८
६	मंत्री के लिए सहस्रशिरा रावण का क्षोभ तथा नाभि दैत्य का जन्म; नाभि का युद्ध हेतु आगमन व मृत्यु।	११२
७	नाभि दैत्य की मृत्यु और सुरेखा असुरी का माया-रूप धारण करना।	१२४
८	सुरेखा द्वारा हनुमान को निगलकर सहस्रशिरा रावण के समीप उगलना एवं हनुमान द्वारा रानियों का कर्ण-नासाच्छेदन।	१३८
९	कम्बु दैत्य का माया-रूप धारण करना, राम का हरण, राम का उद्धार तथा बिलंका-दहन।	१४७
१०	त्रिशिरा का प्रथम युद्ध हेतु आगमन, देवगण द्वारा श्रीराम को विजयश्रय-प्रदान एवं त्रिशिरा का पलायन।	१६८

विषय पृ

११ त्रिशिरा और सहस्रशिरा का कथोपकथन, राजा का प्रथम युद्ध हेतु आगमन, राम तथा देवगण के साथ युद्ध, युद्ध में दण्ड भग्न होने पर पलायन, आत्म-खेद तथा रात्रि में दुःस्वप्न-दर्शन। १९

१२ शतशिरा का प्रथम युद्ध हेतु आगमन; शुम्भ, निशुम्भ, अम्बा, कदम्बा की मृत्यु, बिलंका-दहन तथा रथ-समेत रानियों का अग्नि में पतन। २१

१३ शतशिरा का पुनः युद्ध हेतु आगमन एवं मृत्यु। २३

१४ त्रिशिरा दैत्य का युद्ध हेतु आगमन तथा हनुमान द्वारा मृत्यु, सहस्रशिरा रावण का युद्ध, रामचन्द्र की पराजय, हनुमान द्वारा राजा की मूर्च्छा तथा पलायन। २५

१५ बिलंका रावण द्वारा ग्रामदेवी की पूजा और वहाँ निष्फल होने पर हवन करना, इसी समय हनुमान और राम का बिलंका में प्रवेश, सहस्रशिरा रावण के साथ युद्ध एवं उसकी सम्पूर्ण सेना का पतन। २६

१६ सहस्रशिरा रावण का खेद, देवताओं की रामचन्द्र से सीता को लाने की प्रार्थना करना तथा देवताओं की बात पर राम का सीता को लाने के लिए हनुमान को भेजना। २८

१७ लक्ष्मण और सीता को लेकर हनुमान का बिलंका-गमन, मार्ग में सुग्रीव के साथ साक्षात्कार तथा बिलंका में प्रवेश। २९

१८ सहस्रशिरा रावण के विषय में श्रीराम और सीता का कथोपकथन तथा सहस्रशिरा रावण के साथ हनुमान, लक्ष्मण तथा श्रीराम का युद्ध। ३०

१९ देवताओं द्वारा सीता की स्तुति, सीता द्वारा मंगलादेवी से पुष्पधनुष की प्राप्ति, असुर को यौवन-दर्शन कराकर पुष्पशर के आघात से उसके मन में पाप-प्रलोभन की उत्पत्ति, राम और लक्ष्मण द्वारा सहस्रशिरा रावण की मृत्यु। ३१७

उत्तर-खण्ड—३२६-६५२

१ श्री गिरिजा जी के प्रश्न तथा श्रीराम जी के अज्ञान के कारण का वर्णन। ३२६

२ महिषासुर, रक्तबीर्य, शुम्भ-निशुम्भ और दुर्गम दैत्यों का वध तथा कात्यायिनी, कौशिकी और दुर्गा का जन्म। ३४६

	विषय	पृष्ठ
३	बहुशिरा का जन्म, युद्ध तथा वध एवं बहुशिरा-द्वीप-निर्माण।	३७९
४	लक्षशिरा का जन्म तथा बिलंका-द्वीप-निर्माण।	३९४
५	शुक्राचार्य के आदेश से लक्षशिरा का विवाह तथा बिलंका में राज्याभिषेक।	४१५
६	बिलंका-वर्णन, सहस्रशिरा का जन्म तथा लक्षशिरा और त्रिशिरा की तपस्या।	४३२
७	लक्षशिरा की उत्कट तपस्या।	४४५
८	सहस्रशिरा के साथ देवताओं का युद्ध एवं वरुण का बन्दी होना।	४५४
९	सहस्रशिरा का दशानन रावण से युद्ध तथा मित्रता।	४७१
१०	सहस्रशिरा की बालि से भिड़न्त।	४९०
११	सहस्रशिरा का बालि द्वारा अपमान।	४९९
१२	शूरसेन द्वारा सहस्रशिरा की नागपाश से मुक्ति।	५०७
१३	लक्षशिरा की वर-प्राप्ति तथा बिलंका का ध्वंस सुनकर कुपित होना और बिलंका का पुनर्निर्माण।	५१३
१४	सेना-सहित श्रीराम की बिलंका-यात्रा तथा लक्षशिरा की गदा से उनका उड़ जाना।	५३३
१५	युद्ध में लक्षशिरा की पराजय।	५५५
१६	जम्ब-कुजम्ब आदि सेनापतियों का युद्ध और मृत्यु।	५९१
१७	पातालकेतु और कल्पासुर का माया-युद्ध; राम, भरत, शत्रुघ्न और सुग्रीव का कुएँ में गिरना एवं विभीषण आदि का मोह।	६०२
१८	हनुमान का अयोध्या-गमन और लक्ष्मण तथा सीता की बिलंका-यात्रा।	६२७
१९	सीता का काली-रूप-धारण और लक्षशिरा का वध।	६३२

श्रीराम-पञ्चायतन

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

शारळादास कृत

बृहत्

बिलंका रामायण

पूर्व खण्ड

वन्दना

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते कथा ।
आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ॥ १ ॥
आदौ राम तपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनम् ।
वैदेही हरणं जटायु मरणं सुग्रीव सम्भाषणम् ॥
बाली निग्रहणं समुद्र तरणं लंकापुरी दाहनम् ।
पश्चाद् रावण कुंभकर्ण निधनं एतानि रामायणम् ॥ २ ॥
रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरम् ।
काकुत्स्थं करुणाकरं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकं ॥
राजेन्द्रं सत्यसंधम् दशरथतनयं श्यामलं शान्तिमूर्तिम् ।
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥ ३ ॥
खर्वस्थूल तनुं गजेन्द्र वदनं लम्बोदरं सुन्दरम् ।
प्रस्पन्दं मधुगन्धलुब्धमधुपं व्यालोल गण्डस्थलं ॥
दन्ताघात विदारिता वसुमती सिंदूर शोभाकरं ।
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम् ॥ ४ ॥
योग ज्ञानधरो तमो गुणधरो विध्वंस्तदक्षध्वरः ।
शाश्वत् भस्मधरो भुजंगमधरः भक्तानुकम्पाधरः ॥
देवो ब्रह्मधरो धरो विषधरो शैलेन्द्रपुत्रीधरः ।
सर्वानन्दधरो सुधाकरधरं मां पातु गंगाधरः ॥ ५ ॥
सरस्वती महामाया विद्दे कमललोचनी ।
मम कण्ठे निवासाय वाक्य देवी नमोस्तु ते ॥ ६ ॥
भवानीशंकरं वन्दे नित्यानन्दं जगद्गुरुम् ।
कामदं ब्रह्मरूपं च भक्तानां अभयप्रदम् ॥ ७ ॥

देवादेवींक वन्दना

जय सर्वमंगळा मा जय कात्यायिनी ।
खण्डा खपरधारिणी महिषामर्दिनी ।। १ ।।
जय जय शारळा गोझंकड़वासिनी ।
जय सिद्ध चण्डीमात अशुभ नाशिनी ।। २ ।।
भैरव मूरतिधरि झंकड़ पुररे ।
जनमिल आसि सिद्ध शारळा रूपरे ।। ३ ।।
संकट तारिणी माँ अभया बरदानी ।
झंकड़े करिछ बिजे महेश भाविनी ।। ४ ।।
अशेष लोक जननी अट आदिमाता ।
तुम्भे कृपा कले मूर्ख पण्डिते गणिता ।। ५ ।।
जय जय सदाशिव त्रिशूळ धारण ।
बिभूति लेपन अंग पार्वती रमण ।। ६ ।।
जय जय नीळकण्ठ जय गंगाधर ।
मोहिल ताण्डव नृत्ये देव तिनिपुर ।। ७ ।।

देवी-देवताओं की वन्दना

माता सर्वमंगला, कात्यायिनी तथा खड्ग और खप्पर धारण करनेवाली महिषासुर-मर्दिनी की जय हो । १ झंकड़ में निवास करनेवाली माँ शारला की जय हो, जय हो । अमंगल का नाश करनेवाली सिद्ध चण्डी माता ! तुम्हारी जय हो, जय हो । २ झंकड़पुर में उग्र मूर्ति धारण कर सिद्ध शारला-रूप में तुमने जन्म लिया । ३ माँ ! तुम संकट से उद्धार करनेवाली हो । अभय का दान देनेवाली महेशमनमोहिनी माँ ! तुमने झंकड़पुर को अपना निवास बनाया है । ४ तुम सम्पूर्ण जगत् की जननी आदिमाता हो । तुम्हारी कृपा करने से मूर्ख की भी गणना पण्डितों में हो जाती है । ५ विभूतिलेपित अंगवाले, पार्वती के साथ विहार करनेवाले त्रिशूलधारी सदाशिव की जय हो ! जय हो । ६ हे नीलकंठ ! हे गंगा को धारण करनेवाले ! तुम्हारी जय हो ! जय हो । हे देव ! आपने ताण्डव नृत्य से तीनों लोकों को मोहित कर लिया है । ७ अहर्निशि क्रुद्धवेश में आप कपिलास* में निवास करते हैं । हे पार्वती के स्वामी !

* कपिलास—— उड़ीसा में ढेंकानाल जिले में कपिलास नाम के एक विशाल पर्वत पर नीलकंठ महादेव का सुरम्य मन्दिर है । जो सदाशिव का नित्य निवास माना जाता है । इसी का नाम 'कैलास' भी है ।

कपिळासवासी दिवा निशि कोपमूर्ति ।
क्षणे क्षणे भोळ जार भारिजा पार्वती ॥ ८ ॥
भरसा करिण मुहिं श्रीपदे शरण ।
आशा बळाइछि मोते करिवा कारण ॥ ९ ॥
शारळादास शरण पशे से चरणे ।
मूर्ख मुहि त पण्डित शास्त्रहिं न जाणे ॥ १० ॥
ज्ञानध्यान जोग लय किछि मोर नाहिं ।
ग्रन्थ भेदिबाकू शक्ति मोर अबा काहिं ॥ ११ ॥
श्री शारळा मातांकर सदा अटे दास ।
तांकरि आज्ञारे शास्त्र अछि मोअभ्यास ॥ १२ ॥
से जाहा करन्ति आज्ञा मूं ताहा लेखइ ।
अपण्डित मूर्ख मोर शास्त्रज्ञान नाहिं ॥ १३ ॥
जय जय जगन्नाथ जगत कारण ।
जय जय जगन्नाथ त्रिलोक तारण ॥ १४ ॥
अधम तारण प्रभु दुःखीजन बन्धु ।
विपद भंजन प्रभु देव कृपासिन्धु ॥ १५ ॥
धरिछ शारंग धनु असिपद्म गदा ।
मुहिं मूर्ख अपण्डित शरण सर्वदा ॥ १६ ॥

आप क्षण-क्षण में ध्यानस्थ हो जाया करते हैं । ८ मुझे आपके श्रीचरणों का भरोसा है । इसी कारण से मेरी इच्छा और दृढ़ हो गई है । ९ शारला दास उन श्रीचरणों की शरण ग्रहण करता है अर्थात् उन श्रीचरणों की भक्ति को ही अपना शरण-स्थल समझता है । मैं तो मूर्ख हूँ । मुझे शास्त्रों का ज्ञान भी नहीं है । १० मेरे पास ज्ञान, ध्यान, लय, योग कुछ भी तो नहीं है । ग्रंथ के रहस्योद्घाटन की शक्ति भी मुझमें कहाँ है ? ११ मैं शारला माता का सदा-सदा का दास हूँ और उनकी ही आज्ञा से मैं शास्त्र का अभ्यासी बना हूँ । १२ वह मुझे जैसी आज्ञा देती है मैं वह ही लिख देता हूँ । मैं तो अज्ञानी मूर्ख हूँ । मुझे शास्त्र का ज्ञान नहीं है । १३ हे त्रिलोक के तारनेवाले जगत के कारण श्री जगन्नाथ ! आपकी जय हो ! जय हो । १४ हे प्रभु ! आप अधमों का उद्धार करनेवाले तथा दीन जनों के बन्धु हैं । हे देव ! आप विपदाओं का नाश करनेवाले कृपा के सागर हैं । १५ आपने शारंग धनुष, गदा तथा असिपद्म अर्थात् चक्र को धारण कर रखा है । मैं मूर्ख तथा अज्ञानी सदैव आपकी शरण में हूँ । १६ शारला का वर्णन करना मेरी शक्ति के बाहर है ।

शास्त्र बखाणिबा मोर नाहिं त शकति ।
श्री शारळा परसादे बळाइछि मति ।। १७ ।।
से देवी झंकड़पुरे अछन्ति जे बसि ।
सुर सिद्ध मुनि ध्यान कसछन्ति आसि ।। १८ ।।
मूर्खकू बोइले साहा हुअइ पण्डित ।
सरस्वती कर कृपा जनकू उदित ।। १९ ।।
मोहिल छतिश रागिणीरे हरि मन ।
तेणु करि तुम्भंकू से होइले प्रसन्न ।। २० ।।
अरक्षिते दया जेबे करिब गो मात ।
आज्ञा हेले रामायण करिबि उकत ।। २१ ।।
श्रीहरि सुमरि नरे संसारू निस्तर ।
श्रीहरिक नाम गोटि संसाररे सार ।। २२ ।।
श्रीहरिक नाम गोटि निरते अभ्यास ।
करि जने तरि जाअ ए भव कळ्मष ।। २३ ।।

शिवपार्वतींकर रामायण चरित कथोपकथन ओ रामचन्द्रक अयोध्या आगमन

एथु अन्ते पार्वती जे जोड़ि बेनिकर ।
शूळपाणि पादतळे कले नमस्कार ।। १ ।।

झंकड़वासिनी माँ शारला की कृपा से मेरी बुद्धि (रामगुण गाने को अग्रसर हो गई है, जिनका ध्यान देवता, सिद्ध तथा मुनि झंकड़ आकर किय करते हैं। १७-१८ अपनी कृपा से मूर्ख को भी विद्वान बना देनेवाली म सरस्वती ! अपने दास पर दया कर दीजिए। १९ आपने छत्ती रागिनियों द्वारा भगवान का मन मोहित कर लिया है। इसी कार प्रभु आप पर प्रसन्न हो गये हैं। २० हे अम्ब ! आप जब मुझ जै अरक्षित (असहाय) जन पर दया कर देंगी तभी आपकी आज्ञा से रामायण का गान करूँगा अर्थात् रामचरित्र कहने में समर्थ होऊँगा। २ श्रीहरि का नाम स्मरण करके मनुष्य संसार से छुटकारा पा जाता है श्रीहरि का नाम ही एक मात्र संसार में सार वस्तु है। २२ एक मा श्रीहरि के नाम का निरन्तर जाप करने से मनुष्य इस भवजाल से त्राण जाता है। सांसारिक यातनाओं से छूट जाता है। २३

शिव-पार्वती का रामायण-चरित-विषयक कथोपकथन तथा रामचन्द्र का अयोध्या-आगमन

इसके पश्चात् पार्वती ने दोनों हाथ जोड़कर त्रिशूल धारण करनेव

आहे विश्वनाथ मोते होइ सुप्रसन्न ।
बुझाइ कहन्तु ए बिलंका रामायण ।। २ ।।
सहस्रशिराकू राम माइले किपरि ।
एथिर वृत्तान्त बोल आहे शूळधारी ।। ३ ।।
बोलन्ति ईश्वर तुम्भे शुण गो पार्वती ।
रामायण ग्रन्थ शुणि हुअसि मुकति ।। ४ ।।
सामवेदू जात एहि ग्रन्थ रामायण ।
हिमवन्त दुलणी गो एकमने शुण ।। ५ ।।
रामायण चरित ए अटे अगोचर ।
लय करि शुणि भवसागररू तर ।। ६ ।।
लंकारे बधिले रावणकू देवराज ।
मानव रूपरे प्रभु कले देवकार्ज्ज ।। ७ ।।
जानकी उद्धारि तारिलेक देवगण ।
अजोध्याकू बाहुड़िले प्रभु रघुराण ।। ८ ।।
कष्ट पारगला शेष हेला बनबास ।
दिवस लेखरे पूर्ण चउद बरष ।। ९ ।।
मार्गशिर मास शुक्लपक्ष गुरुवारे ।
द्विज नामे नक्षत्र जे अटे से दिनरे ।। १० ।।

शिवजी के चरणों में प्रणाम किया । १ वह उनसे बोलीं, हे जगत् के स्वामी ! मुझ पर प्रसन्न होकर यह बिलंका रामायण मुझे समझाकर कहें । २ श्रीराम ने सहस्रशिरा का वध किस प्रकार किया ? हे शूलपाणि ! यह वृत्तान्त आप मुझसे कहें । ३ भगवान शिव बोले, हे पार्वती ! तुम सुनो ! रामायण-ग्रंथ के सुनने से मुक्ति मिल जाती है । ४ यह रामायण ग्रंथ सामवेद से उत्पन्न हुआ है । हे हिमांचलकुमारी ! एकाग्र चित्त से श्रवण करो । ५ यह रामायण का चरित्र अगोचर है । तन्मयता से सुनकर भव-सागर से पार हो जाओ । ६ देवराज ने लंका में रावण का वध किया तथा मानव रूप धारण करके देवकार्य सम्पन्न किया । ७ जानकी का उद्धार कराके, देवताओं को त्राण दिलाकर प्रभु राघवेन्द्र अयोध्या की ओर लौट पड़े । ८ कष्ट का समय पार हो गया । वनवास भी समाप्त हो गया । दिनों के अनुसार चौदह वर्ष पूर्ण हो चुके थे । ९ मार्गशीर्ष महीने का शुक्लपक्ष था । द्विज नामक नक्षत्र से युक्त गुरुवार का दिन था । १० बालव करणयुक्त आयुष्मान नामक योग

बाळव करण आयुष्मान नामे जोग ।
पंचिमीतिथिरे दिवा सात दण्डभोग ।। ११ ।।
सरजू कूळरे जाइ रहिले श्रीराम ।
जानकी लक्ष्मण संगतरे हनुमान ।। १२ ।।
बोलन्ति लक्ष्मणे चाहिं कौशल्यांक बळा ।
बाबू रे सौमित्री बनबास पार गला ।। १३ ।।
शुणि करि खड़ि घेनि लक्ष्मण देखिले ।
धनु एकोइश दिन अजोध्या छाड़िले ।। १४ ।।
धनु एकोइश दिन होइला सम्पूर्ण ।
आजि हेला पुणि माघ मास सात दिन ।। १५ ।।
अठर दिवस देव उराळि गलाणि ।
अजोध्यापुरकू चाल जिबा रघुमणि ।। १६ ।।
श्रीराम बोइले बाबू शुणरे लक्ष्मण ।
अजोध्या जिबाकु संकुचित मोर मन ।। १७ ।।
अजोध्याकु जाअ बाबू शुणरे लक्ष्मण ।
बारता कहिण आस राजा सन्निधान ।। १८ ।।
मोहर बारता नेइ कहिबो मातांकू ।
राजा श्रद्धा कले सिना जिबि अजोध्याकू ।। १९ ।।
लक्ष्मण बोइले देव एहा किम्पा कह ।
शान्त शीळ होइ दुष्टजन बुद्धि बह ।। २० ।।

था। उस दिन पंचमी तिथि के सात दण्ड व्यतीत हो चुके थे। ११ जानकी, लक्ष्मण तथा हनुमान के साथ श्रीराम सरयू तट पर जा पहुँचे। १२ लक्ष्मण की ओर ताकते हुए कौशल्यानन्दन बोले, "हे तात सौमित्र! वनवास का समय तो व्यतीत हो चुका"। १३ यह सुनकर लक्ष्मण ने खड़िया लेकर गणना की। धनु के इक्कीसवें दिन अयोध्या का त्याग किया गया था। १४ इस समय धनु के इक्कीस दिन पूर्ण हो चुके हैं। आज माघ महीने का सातवाँ दिन है। १५ हे देव! अट्ठारह दिन अधिक पार हो गये हैं। हे रघुश्रेष्ठ! चलिए अयोध्या नगर चलें। १६ श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा, हे भाई! अयोध्या चलने में मेरा मन संकुचित हो रहा है। १७ तुम अयोध्या जाकर राजा से समाचार देकर वापस आ जाओ। १८ मेरा सम्वाद लेकर माता से कहना, यदि राजा को स्नेह होगा तभी मैं अयोध्या जाऊँगा। १९ लक्ष्मण ने कहा, हे देव! आप

अजोध्या नायक तुम्भे अट रघुबीर।
तुम्भर अटूँ हे आम्भेमाने परिवार॥ २१ ॥
चाल बेगे अजोध्याकू न बिचार आन।
जननी मानंकू जाइ करिबा दर्शन॥ २२ ॥
कहूँ कहूँ सन्ध्या काळ होइला प्रवेश।
सन्ध्या तर्पणादि शेषकले रघुशिष्य॥ २३ ॥
पितृगण देवतांकू कले जळदान।
बहुफळमूळ आणि देला हनुमान॥ २४ ॥
जानकी लक्ष्मण जाइ स्नान कले बेगे।
फळ मूळ बाण्टि देले राम चारिभागे॥ २५ ॥
भोजन सारिण राम कले आचमन।
कलेक कोमळ पत्र शय्यारे शयन॥ २६ ॥
शोइले जानकीदेवी श्रीरामंक कोळे।
बसिले पवन सुत जाइ पाद तळे॥ २७ ॥
एथू अन्ते जाहा हेला शुण गो पार्वती।
जेमन्ते अजोध्या नगरर दिव्य रीति॥ २८ ॥
पाटराणी कौशल्या गणूथिले दिन।
चउद बरष हेला आजहूँ सम्पूर्ण॥ २९ ॥

शान्त तथा शीलवान होकर दुष्ट पुरुषों जैसी दुर्बुद्धि की बातें कैसे कर रहे हैं ? २० हे रघुवीर ! आप अयोध्या के नायक (स्वामी) हैं, हम सभी आपके परिजन हैं। २१ अन्य कुछ न सोचकर अब शीघ्र ही अयोध्या चलकर माताओं के दर्शन करें। २२ इस प्रकार वार्तालाप करते-करते सन्ध्या हो गई। सन्ध्या-तर्पणादि से निवृत्त होकर रघुनन्दन श्रीराम ने पितरों तथा देवताओं को जलदान किया। तभी हनुमान जी ने बहुत से फल-मूल ला दिये। २३-२४ तदुपरान्त जानकी और लक्ष्मण ने जाकर शीघ्र ही स्नान किया। इसी समय श्रीराम ने फल-मूलादि चार भागों में विभक्त कर दिये। २५ भोजन की समाप्ति पर श्रीराम ने आचमन किया तथा कोमल पल्लवासन पर सो गए। २६ श्री जानकी जी राघवेन्द्र की गोद में सो गईं। पवनकुमार चरणों की ओर जाकर बैठ गए। २७ हे पार्वती ! इसके पश्चात् अवध में जैसी दिव्य रीतियाँ हुईं उनके विषय में सुनो। २८ महारानी कौशल्या दिन गिन रही थी। आज चौदह वर्ष पूर्ण हो चुके। २९ उन्होंने रात्रि में सुमन्त्र को बुलाकर कहा, हे मंत्रीवर ! मेरे पुत्र का वनवास समाप्त हो गया। ३० शीघ्र ही सेना में जाकर

रात्रिरे डाकिले भो सुमंत्र मंत्रीबर ।
बनबास शेष हेला मोर पुत्रंकर ।। ३० ।।
उत्सव कराअ कटकरे बेगे जाइँ ।
घोषणा दिआअ वीर तूरीकू बजाइ ।। ३१ ।।
हाट बाट दाण्डमान खरकाइ दिअ ।
मण्डाइण नगररे पसरा बसाअ ।। ३२ ।।
अधिक चउद दिन होइलेहें गत ।
काहिं पाइँ बनरू मो न आसन्ति सुत ।। ३३ ।।
एते बोळि कउशल्या बेगे गले चळि ।
बशिष्ठंक पादतळे कले निउछळि ।। ३४ ।।
कल्याण बांछिले तहिं मुनि ब्रह्मजति ।
तुम्भंकू श्रीरामचन्द्र हेउ परापति ।। ३५ ।।
कौशल्या बोइले शुण आहे तपोधन ।
चउद बरष होइ थिलेहे सम्पूर्ण ।। ३६ ।।
केतेदिने आसिबेक मोहर कुमर ।
बिचारि कहिबा हेउ आहे मुनिबर ।। ३७ ।।
शुणिण बसिले ध्यान करि ब्रह्मजति ।
ध्यानरे जाणिळे बिजे कले रघुपति ।। ३८ ।।
सरजू कूळरे बसिछन्ति तिनि जण ।
बोइलेक अइलेणि श्रीराम लक्ष्मण ।। ३९ ।।

उत्सव आयोजित करो । वीर वाद्य तुरही बजाकर इसकी घोषणा करा दो । ३१ बाजार, मार्ग, सड़कें स्वच्छ करवा दो । नगर को सुसज्जित करके पेंठ लगवा दो । ३२ चौदह दिन और अधिक बीत गए हैं । किस कारण से मेरा लाल वन से वापस नहीं आ रहा । ३३ इतना कहकर कौशल्या बड़े वेग से जाकर महर्षि वशिष्ठ के चरणों में नत हो गई । ३४ तब ब्रह्मर्षि वशिष्ठ ने उन्हें श्रीरामचन्द्र की प्राप्ति अर्थात् मिलन का आशीर्वाद प्रदान किया । ३५ कौशल्या ने कहा, हे तपोधन ! चौदह वर्ष समाप्त हो चुके हैं । ३६ मेरा लाल और कितने दिनों में आएगा ? हे मुनिश्रेष्ठ ! आप विचार करके बतलाइए । ३७ ऐसा सुनते ही ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जी ध्यानस्थ हो गए । वह जान गए कि राघव पधार चुके हैं । ३८ उन्होंने कहा कि श्रीराम तथा लक्ष्मण आ चुके हैं और वह तीनों व्यक्ति सरयू-तट पर विराजमान हैं । ३९ सभी माताएँ अर्घ्य की थाली लेकर

अर्घ्यथाळी घेनि एबे बाहार गोमाए।
श्री रामंकू आणि जिबा नदीकूळ जाए॥ ४० ॥
उसत होइले शुणि करि महामाइ।
स्नान आदि नित्यकर्म सारिलेक जाइ॥ ४१ ॥
साजिले शउच होइ बेगे अर्घ्यथाळी।
पूजि ग्राम देवतींकू देले नेइ बळि॥ ४२ ॥
प्रणमित होइ देबि जोड़ि बेनी कर।
लक्षेक छागळ देबि आसु मो कुमर॥ ४३ ॥
जेबे सर्व मंगळा गो होइलू सदय।
अजोध्यारे राजा आसि हेउ मो तनय॥ ४४ ॥
एमन्त प्रकारे तांकू मणाइ कहिले।
हर गउरिंक पाशे जाइण मिळिले॥ ४५ ॥
कर जोड़ि राम माता करन्ति जे स्तुति।
दयाकर आसु मोर पुअ रघुपति॥ ४६ ॥
एहि बर दिअ प्रभु पार्वती रमण।
दया कर मोते स्वामी आसु मो नन्दन॥ ४७ ॥
एते बोलि माए तहिं होइले बाहार।
सबूराणी माने छन्ति संगते तांकर॥ ४८ ॥
जानकींक तिनिभग्नी अर्घ्यथाळी घेनि।
बाहार होइले शुणि कौशल्यांक बाणी॥ ४९ ॥

श्रीराम की अगवानी करने सरयू नदी के कूल तक चलें। ४० महारानी कौशल्या यह सुनकर आतुर हो गईं। उन्होंने स्नानादि नित्यकर्म सम्पन्न किये। ४१ पवित्र होकर शीघ्रता से अर्घ्य की थाली सजाई तथा ग्राम देवी की पूजा करके उनके निमित्त बलि प्रदान की। ४२ उन्होंने दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा, हे देवि! मेरा पुत्र आ जाय, मैं तुम्हें एक लाख बकरे प्रदान करूंगी। ४३ हे सर्वमंगला! जब तुम हमारे ऊपर इतनी दयालु हो तो मेरा पुत्र आकर अयोध्या का राजा बने। ४४ इस प्रकार मनौती मानकर कौशल्या शिव-पार्वती के निटक जा पहुंचीं। ४५ राम की माता हाथ जोड़कर उनकी स्तुति करती हुई बोलीं, हे प्रभु! आप कृपा करें। मेरा पुत्र राघव आ जाय। ४६ हे पार्वतीरमण प्रभु! हे स्वामी! मुझे दया करके यही वर प्रदान करें कि मेरा पुत्र वापस आ जाय। ४७ इतना कहकर माता बाहर निकल पड़ीं। उनके साथ अन्य सभी रानियाँ भी थीं। ४८ कौशल्या के बचनों को सुनकर सीताजी की

अजोध्या कटकजाक पड़िला चहळ ।
के बोले अइले राम देखि जिबा चाळ ।। ५० ।।
के बोलन्ति आणिबाकू जाउछन्ति माए ।
एते बोलि गोड़ाइले पच्छरे सभिएँ ।। ५१ ।।
घर द्वार छाड़ि करि धामन्ति सइने ।
भरत बाहार हेले घेनि शत्रुघने ।। ५२ ।।
पात्र मित्र दण्ड छत्र अमात्य सहित ।
बीर तूरी शबदरे पृथ्वी चमकित ।। ५३ ।।
ब्राह्मण ज्योतिष भाट स्तुतिकारी जने ।
श्रीराम अइले बोलि धामन्ति बहने ।। ५४ ।।
अजोध्यार पुर जाक गहळ चहळ ।
श्रीराम अइले बोलि लागिगला गोळ ।। ५५ ।।
दाण्डरे जिबाकू पथ केहि न पाआन्ति ।
डबुरा डबुरि होइ समस्ते धाआन्ति ।। ५६ ।।
हुळहुळि शब्द शुभु अछि निरंतर ।
रात्र अर्ध समयरे होइले बाहार ।। ५७ ।।
प्रहरेक राति थाउँ थाट चळिगले ।
सरजू नदीर कूळे जाइण मिळिले ।। ५८ ।।

तीनों बहनें अर्घ्य-थाली लेकर बाहर निकल आयीं । ४९ सम्पूर्ण अयोध्या में बात फैल गई । कोई कहने लगा कि राम आ गये हैं, चलो देखने चलें । ५० कोई कह रहा था कि उन्हें लाने के लिए माताएँ जा रही हैं । ऐसा कहकर सभी उनके पीछे लग गए । ५१ घर-द्वार छोड़कर लोग पीछे-पीछे दौड़ने लगे । शत्रुघ्न को लेकर भरत जी चल पड़े । ५२ उनके साथ पात्र, मित्र, मंत्रि-परिषद् तथा दण्ड-छत्र चल रहे थे । वीर वाद्य, तूर्य-निनाद से पृथ्वी कम्पित हो रही थी । ५३ श्रीराम आ गए, ऐसा कहकर ब्राह्मण ज्योतिषी, भाट तथा चारण शीघ्रता से दौड़ पड़े । ५४ श्रीराम आ गये —यह जानकर सम्पूर्ण अयोध्या नगरी में चहल-पहल मच जाने से झुण्ड के झुण्ड उमड़ पड़े । ५५ भीड़ के कारण किसी को जाने के लिए मार्ग नहीं मिल रहा था । सभी धक्का-मुक्की करते हुए दौड़ रहे थे । ५६ निरंतर मांगलिक शब्द सुनाई पड़ रहे थे । अर्धरात्रि के समय ही सब निकल पड़े । ५७ एक प्रहर रात्रि शेष रहने तक सारा दल सरयू-तट पर जा पहुँचा । ५८ श्री रघुनाथजी जानकीजी के साथ लेटे हुए वनवास के

जानकी घेनिण शोइछन्ति रघुनान ।
कुहाकुहि हेउ छन्ति बन कथामान ॥ ५९ ॥
बाद्यर शबद जहूँ शुभिलाक तहिं ।
शय्या छाड़ि उठिले श्रीराम बइदेही ॥ ६० ॥
श्रीमुखकू पखाळिले नदी जळघेनि ।
कि शबद बोलि बिचारन्ति रघुमणि ॥ ६१ ॥
धनु धरि उठि बेगे सुमित्रांक चाट ।
देखिले सरजु कूळे गह गह थाट ॥ ६२ ॥
चाहिंले निरीक्षिकरि सुमित्रानन्दन ।
रथगज अश्व आदि अजोध्यार सैन्य ॥ ६३ ॥
बोइले रामंकू तुम्भे शुण सीतानाथ ।
अजोध्यार थाट घेनि आसन्ति भरत ॥ ६४ ॥
आम्भंकू एठारू प्राय देबे घउड़ाइ ।
अजोध्या कटकू आसुछन्ति एथिपाइँ ॥ ६५ ॥
थाट घेनि चळाउछि वारण पाइक ।
निश्चय करिबे जुद्ध हे रघुनायक ॥ ६६ ॥
मोते जेबे आज्ञा देव प्रभु रघुनाथ ।
सैन्यबळ सहिते मूँ मारिबि भरत ॥ ६७ ॥
शुणि करि हंसिलेक कौशल्या तनुज ।
राजा देले घउड़ाइ राज्यरे कि कार्ज्ज ॥ ६८ ॥

संस्मरण कह-सुन रहे थे । ५९ जब उन्हें वहाँ वाद्य-नाद सुनाई पड़ा तो शय्या छोड़कर दोनों उठ खड़े हुए । ६० रघुवेन्द्र ने नदी से जल लेकर श्रीमुख प्रच्छालन किया तथा यह कैसा शोर है, इस पर विचार करने लगे । ६१ सुमित्रानन्दन शीघ्र ही धनुष लेकर उठे तथा उन्होंने सरयू तट पर दल-बल की गहमा-गहमी देखी । ६२ सुमित्रानन्दन ने बड़े ध्यान से अयोध्या के रथों, हाथी, घोड़ों आदि से युक्त सेना को देखा । ६३ उन्होंने श्रीराम से कहा, हे सीतानाथ ! आप सुनिए— अवध की सेना लेकर भरत आ रहे हैं । ६४ लगता है वह हमें यहाँ से भगा देंगे । अयोध्या की सैन्य-वाहिनी लिये रथी, गजारोही इधर ही चले आ रहे हैं । हे रघुनायक ! वह निश्चित रूप से युद्ध करेंगे । ६५-६६ हे प्रभु रघुनाथ ! जब आप मुझे आज्ञा देंगे, मैं सैन्य-वाहिनी समेत भरत को मार डालूँगा । ६७ यह सुन कर कौशल्यानन्दन हँस पड़े और बोले, जब राजा ही हमें भगा दे तो फिर

से जेबे नदेब मोते राज्ये पशिबाकू ।
जानकी घेनिण पुणिजिबि बनस्तकू ।। ६९ ।।
तुहि जाइ भरतर सेवा करुथिबु ।
तोर संगे गोळ कले बनस्ते पशिबु ।। ७० ।।
कहूँ कहूँ उदे हेले प्रभु दिवाकर ।
सरजू नदीकू थाट सैन्य हेले पार ।। ७१ ।।
देखुथिले उभा होई करि देवी सीता ।
देखि शाशुमानंकू जे नुआँइले मथा ।। ७२ ।।
अंचळ उहाड़ि देवी हसिले झटति ।
बोइले रामकू तुम्भ माता आसुछन्ति ।। ७३ ।।
शुणि करि संकुचित होइले श्रीराम ।
सीतांकू बोइले तुम्भे कर जा प्रणाम ।। ७४ ।।
उच्चे थाइ चाहिंदेले प्रभु चापधर ।
बशिष्ठ सहित आसुछन्ति मंत्रीवर ।। ७५ ।।
भरत रामंकू देखि रथरु उतुरि ।
कर पत्र जोड़ि उभा दन्ते कूटा धरि ।। ७६ ।।
भरतकू देखि देव श्रीरघुनन्दन ।
आनन्दरे चक्षु दुइ कले थन थन ।। ७७ ।।
पुत्रकू चाहिण देवी कउशल्या राणी ।
आनन्दे बहिला बेनि नेत्रु अश्रुपाणि ।। ७८ ।।

हमें राज्य से क्या प्रयोजन ? ६८ यदि वह हमें राज्य में न घुसने देंगे तो मैं जानकी को लेकर फिर वनप्रान्त में चला जाऊँगा । ६९ तुम जाकर भरत की सेवा करते रहना । यदि तुम्हारे साथ भी झगड़ा हो तो तुम भी वन में चले आना । ७० इतना कहते-कहते भगवान भास्कर उदित हो गए । दल-बल सहित सारी सेना सरयू नदी के पार आ गई । ७१ सीता देवी खड़ी होकर ताक रही थीं । उन्होंने सासुओं को देखते ही मस्तक झुका दिया । ७२ आँचल की आड़ में मुस्कुराते हुए उन्होंने राम से कहा कि आपकी माताजी आ रही हैं । ७३ यह सुनकर श्रीराम संकुचित हो गये । उन्होंने सीता से जाकर प्रणाम करने को कहा । ७४ ऊँचे स्थान से धनुर्धारी प्रभु राम ने महर्षि वशिष्ठ के साथ आते हुए श्रेष्ठ मंत्री (सुमन्त्र) को देखा । ७५ राम को देखकर भरत रथ से उतरकर दाँतों में तिनका दबाकर हाथ जोड़कर खड़े हो गए । ७६ भरत को देखकर प्रभु रघुनन्दन की दोनों आँखें आनन्द से छलछला उठीं । ७७ पुत्र को देखकर महारानी

हा राम हा राम बोलि बेगे बाहु तोळि ।
शोक भरे माता माने छाड़न्ति बोबाळि ॥ ७९ ॥
कर जोड़ि राम जाइँ पड़िले पादरे ।
कउशल्या राणी बेगे धइले कोळरे ॥ ८० ॥
सीता कले शाशुंकर चरणे बन्दन ।
पुत्रबधू कोळे घेनि करन्ति रोदन ॥ ८१ ॥
सुमित्रांक पादतळे ओळगिले राम ।
कैकेयींक पादतळे कलेक प्रणाम ॥ ८२ ॥
ओळगिले वशिष्ठंक पादे रघुराण ।
मुनिपादे ओळगिले जानकी लक्ष्मण ॥ ८३ ॥
भरत शत्रुघ्न पड़िलेक राम पादे ।
देखणाहारीए आसि देखन्ति बिषादे ॥ ८४ ॥
बोलुछन्ति रघुसाइँ वशिष्ठंकू चाहि ।
एमानंकु संगे घेनि अइल किम्पाइँ ॥ ८५ ॥
मूंत अटे बनवासी बनस्ते मो घर ।
पूरि नाहि बनबास आबर मोहर ॥ ८६ ॥
बशिष्ठ बोइले आउ नाहि बनबास ।
उनविंश दिन पुणि हेलाणि विशेष ॥ ८७ ॥

कौशल्या देवी के युगल नेत्रों से आनन्दाश्रु निकल पड़े । ७८ माताएँ हाथ उठा-उठाकर हा राम ! हा राम ! कहते हुए शोक से क्रन्दन करने लगीं । ७९ हाथ जोड़कर श्रीराम उनके चरणों में गिर पड़े । रानी कौशल्या ने वेग से उन्हें अपने अंक में भर लिया । ८० सीता ने सासुओं के चरणों की वन्दना की । पुत्रबधू को गोद में लेकर वह सब रुदन करने लगी । ८१ राम ने सुमित्रा के चरणों में प्रणाम किया । फिर कैकेयी के चरण पकड़ लिये । ८२ रघुकुल में श्रेष्ठ श्रीराम ने वशिष्ठ के चरणों की वन्दना की तथा लक्ष्मण और जानकी भी उनके चरणों में नतमस्तक हो गए । ८३ भरत और शत्रुघ्न श्रीराम के चरणों में गिर पड़े । देखनेवाले भी देखकर विषाद में भर गए । ८४ वशिष्ठजी की ओर देखकर श्री रघुचन्द्र बोले कि आप इन सबको साथ लेकर किसलिए आए हैं ? ८५ मैं तो वनवासी हूँ और वन ही मेरा घर है । अभी मेरा वनवास पूर्ण नहीं हुआ है । ८६ वशिष्ठजी बोले, अब और वनवास नहीं है । उन्नीस दिन और अधिक हो गये हैं । ८७ अब अन्यथा न सोचकर हे रघुश्रेष्ठ !

चाल एबे अजोध्याकु न बिचार आन ।
सम्भाळ तोहर राज्य जाइँ रघुनान ॥ ८८ ॥
श्रीराम बोइले शुण ब्रह्मांकर सुत ।
अजोध्यार राजा सिना अटइ भरत ॥ ८९ ॥
से बोइले सिना जिबि अजोध्यानगर ।
नोहिले त मुनि मोर बनस्तरे घर ॥ ९० ॥
शुणिण भरत कम्पे थरथर होइ ।
भो देव श्रीराम बोलि पादरे पड़इ ॥ ९१ ॥
तुसिना अजोध्या राजा तु सिना ठाकुर ।
तोहर आज्ञारे जगिअछि एहि पुर ॥ ९२ ॥
आस्थाने बसिबाकू मुँ भाजन नुहइ ।
डगर होइण राज्य बुलुथाइ मुहिं ॥ ९३ ॥
भलमन्द सिना मुहिं बुझइ राज्यर ।
सिंहासने थोइ रत्न पादुका तुम्भर ॥ ९४ ॥
मुहिं कि तुम्भर छत्र बहने भाजन ।
अजोध्याकू एबे बिजे करन्तु राजन ॥ ९५ ॥
एबे जे सम्हाळ अजोध्याकु रघुसाइँ ।
अकारणे कोपकल मोठारे किम्पाइँ ॥ ९६ ॥

अयोध्या चलकर अपना राज्य सम्हालो । ८८ श्रीराम ने कहा, हे ब्रह्माजी के पुत्र ! आप सुनें । अयोध्या का राजा तो भरत है । ८९ उसके कहने पर ही मैं अयोध्या जा सकता हूँ । नहीं तो हे मुनि ! वन ही मेरा घर है । ९० यह सुनकर भरत थर-थर काँपने लगे तथा हे देव ! हे राम ! कहकर उनके चरणों में गिर पड़े । ९१ उन्होंने फिर कहा, हे राघव ! तुम्हीं तो अयोध्या के राजा हो । तुम्हीं तो मालिक हो । तुम्हारी आज्ञा से ही मैं इस नगर की चौकीदारी करता रहा । ९२ मैं सिंहासन पर बैठने का पात्र नहीं हूँ । मैं तो दूत बनकर राज्य में घूमता रहा । ९३ सिंहासन पर आपकी रत्नपादुका रखकर मैं राज्य के विषय में अच्छे-बुरे की साज-सम्हाल करता रहा । ९४ मैं क्या तुम्हारे छत्र का वहन करने का पात्र हूँ । हे राजन् ! अब आप अयोध्या को चलें । ९५ हे रघुनाथ ! अब आप अयोध्या का भार सम्हालें । अकारण ही आपने मेरे ऊपर कोप किसलिए किया है । ९६ यह कहते-कहते भरत रोने लगे । मत रो !

कहुँ कहुँ घन-घन कांदिले भरत ।
न कान्द न कान्द प्रबोधन्ति रघुसुत ॥ ९७ ॥
तु किम्पाँ रोदन करुअछुरे सोदर ।
माता सिना भिआइले एतेक तोहर ॥ ९८ ॥
पुत्र हेला राजा कले सफळ लोचन ।
कष्ट सिना पाइलुरे आम्भे तिनि जन ॥ ९९ ॥
शुणिण नगर लोके कले हाहाकार ।
कैकेयी राणिकु सर्वे करन्ति धिक्कार ॥ १०० ॥
श्रीराम कहन्ति वशिष्ठंक मुख चाहिं ।
भरतकु कुह तुम्भे राज्य करु जाइ ॥ १०१ ॥
मुँ किम्पाँ छड़ाइ नेबि तार राजपण ।
करिबि ए नदीकूळे नगर भिआण ॥ १०२ ॥
श्रीराम निराश कथा शुणि नग्रलोके ।
हाहाकार करि शोक करन्ति जे थोके ॥ १०३ ॥
वशिष्ठ बोइले श्री रामंक मुख चाहिं ।
भरतकू कोप तुम्भे करुछ किम्पाइँ ॥ १०४ ॥
दइब जोगे तुम्भर हेला बनबास ।
परंब्रह्म पुरुष तु अटु रघुशिष्य ॥ १०५ ॥

मत रो ! कहकर रघुनन्दन उन्हें समझाने लगे । ९७ अरे सहोदर ! तुम किसलिए रुदन कर रहे हो ? यह तो तुम्हारी माताजी की बुद्धि की उपज थी । ९८ अपने पुत्र को राजा देखकर उसके नेत्र सफल हो गये । कष्ट तो केवल हम तीनों को प्राप्त हुआ । ९९ यह सुनकर सम्पूर्ण नगर-वासी हाहाकार कर उठे । सभी कैकेयी रानी को धिक्कारने लगे । १०० श्रीराम ने वशिष्ठ के मुख की ओर देखकर कहा, आप भरत से कह दें कि वह जाकर राज्य करे । १०१ मैं उसके राजपद को क्यों छीन लूं ? मैं तो इसी नदी के तट पर नगर बसा लूंगा । १०२ श्रीराम की इन निराशापूर्ण बातों को सुनकर नगरवासी झुण्ड के झुण्ड हाहाकार करते हुए शोकमग्न हो गए । १०३ वशिष्ठ ने श्रीराम के मुख को देखकर कहा कि तुम भरत पर किसलिए क्रोध कर रहे हो । १०४ दैवयोग से तुम्हें बनवास मिला था । हे राघव ! तुम तो परमपुरुष ब्रह्म हो । १०५ रथ पर आरोहण करके अयोध्या चलकर सिंहासनासीन होकर सुख से

अजोध्याकु चाल रथे करि आरोहण ।
सिंहासने बसि सुखे पाळ प्रजाजन ।। १०६ ।।
बशिष्ठंक कथा मानि प्रभु रघुवीर ।
जानकींकु घेनि बिजे बिमान उपर । १०७ ।।
हान्दोळा उपरे बिजे कले माता माने ।
आनन्दे चढ़िले सर्वे जे जाहार जाने ।। १०८ ।।
चउदोळ आरोहिले जानकी भगिनी ।
भरत शत्रुघ्न गले घेनिण रानि ।। १०९ ।।
हुळ हुळि दिर्यान्त जे मिळि नारीगण ।
अन्धार निशारे कि उदय हेले जन्हु ।। ११० ।।
हान्दोळा उपरे विजे कले तिनि राणी ।
अन्तः बाड़ मध्ये बिजे जानकी भउणी ।। १११ ।।
सरजूकु पार होइ गले रघुबीर ।
चहळरे उछुळइ अजोध्या नगर ।। ११२ ।।
सिंहद्वारे प्रवेशिले श्रीरामंकु घेनि ।
अर्घ्य घेनि बन्द्यापन करन्ति कामिनी ।। ११३ ।।
सीता घेनि मातांकुजे ओळगि होइले ।
भितर पुररे जाइ श्रीराम रहिले ।। ११४ ।।
चन्द्रशाळा पुरे विजे कोदण्ड धारण ।
हनुमन्तकु गौरव कले रघुराण ।। ११५ ।।

प्रजा का पालन करो । १०६ वशिष्ठजी की बात मानकर श्रीराम जानकी को लेकर विमान पर आरूढ़ हो गये । १०७ माताएँ पालकियों पर बैठ गईं तथा अन्य सभी लोग आनन्दपूर्वक अपने-अपने वाहनों पर सवार हो गये । १०८ जानकीजी की बहनें डोलियों में बैठ गईं । भरत और शत्रुघ्न सेना लेकर चल पड़े । १०९ नारियाँ एकजुट होकर मंगल-ध्वनि करने लगीं । ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों अँधेरी रात में चन्द्रमा निकल आया हो । ११० पालकियों पर तीनों रानियाँ सवार थीं । परदे में सीता की बहनें बैठी थीं । १११ रघुवीर राम के सरयू पार कर लेने पर सम्पूर्ण अवध नगर चहल-पहल के साथ उमड़ पड़ा । ११२ श्रीराम को लेकर सभी सिंहद्वार में प्रविष्ट हुए । नारियाँ अर्घ्य देकर आरती करने लगीं । ११३ सीता के साथ सभी ने माताओं को प्रणाम किया तथा श्रीराम अन्तःपुर में जा पहुँचे । ११४ चन्द्रशालापुर में पहुँचकर कोदण्ड-

स्नाहान शउच आदि सारि रघुवीर ।
पितांक तर्पण सारि आसि निजघर ।। ११६ ।।
नूतन बसन पिन्धि मार्जना होइले ।
देव पूजा सारि राम लक्ष्मणे राइले ।। ११७ ।।
ब्राह्मणंकु निमंत्रण कराइ भोजन ।
धन बस्त्र अळंकार विप्रे देले दान ।। ११८ ।।
गोदान जे अन्नदान भूमिदान द्यन्ति ।
दान पाइ बिप्र माने आनन्द हुअन्ति ।। ११९ ।।
मातांकु ओळगि हेले प्रभु रघुवीर ।
कल्याण करन्ति माए जशलाभ कर ।। १२० ।।
मणोहि सारिण से कोदण्ड चाप साइँ ।
वशिष्ठंकु घेनि बिजे पळंकरे जाइ ।। १२१ ।।
माता माने अछन्ति सुमंत्र मंत्रीवर ।
पात्र मित्र सहिते भरत महावीर ।। १२२ ।।
कहन्ति बनस्त कथा कोदण्ड धारण ।
दुःखित हुअन्ति शुणि अजोध्यार जन ।। १२३ ।।
रावणर पुर कथा जुद्धर बारता ।
चोराइ रावण जेन्हे घेनि गला सीता ।। १२४ ।।

धारी राम ने हनुमान को सम्मान प्रदान किया । ११५ फिर रघुवीर राम ने स्नान-शौचादि से निवृत्त होकर पिता को तर्पण करके अपने भवन में प्रवेश किया । ११६ नवीन वस्त्र धारण करके पवित्र होकर देव-पूजन समाप्त करके श्रीराम ने लक्ष्मण को बुलाया । ११७ ब्राह्मणों को निमंत्रित करके भोजन कराया तथा विप्रों को धन, वस्त्र, अलंकारादि दान किये । ११८ गोदान, अन्नदान तथा भूमिदान पाकर ब्राह्मण आनन्दित हो गये । ११९ राघवेन्द्र ने माताओं को प्रणाम किया और उन्होंने राम को यशप्राप्ति का आशीर्वाद दिया । १२० सारी मनौतियाँ पूर्ण करके रघुनन्दन श्रीराम वशिष्ठ को लेकर पलंग पर विराजमान हो गये । १२१ सभासद, मित्रगण, माताएँ, मंत्रियों में श्रेष्ठ सुमन्त्र, महावीर तथा भरत सभी वहाँ उपस्थित थे । १२२ कोदण्डधारी श्रीराम बनवास की कथाओं का वर्णन करने लगे । जिसे सुनकर अवधवासी दुखी हो गए । १२३ रावण की नगरी लंका के समाचार, युद्ध-वर्णन तथा जिस प्रकार से रावण सीता को चोरी करके उठा ले गया । १२४ जिस प्रकार से समुद्र में

समुद्र बान्धिले जेन्हे मलाबाळी बीर ।
हनुकु प्रशंसा कले प्रभु रघुवीर ॥ १२५ ॥
ए हनु प्रसादे पाइलिमुं बइदेही ।
लंकापुरे ठाव कला सिन्धु पार होइ ॥ १२६ ॥
ए सन्देश देबारु मुँ सैन्य घेनिगलि ।
रावणकु बध करि जानकी आणिली ॥ १२७ ॥
शुणि पुरलोके हनु ठारे श्रद्धा कले ।
धन्यरे बानर गोटि बोलिण बोइले ॥ १२८ ॥
कथा कहु कहु राम कलेक शयन ।
निशबद हेले जहुँ अजोध्यार जन ॥ १२९ ॥
रात्रगोटि पाहिगला शुभे शंख ध्वनि ।
शय्यारु उठिले राम धनु शर घेनि ॥ १३० ॥
नित्य कर्म सारि बेगे प्रभु रघुबीर ।
हनुमन्त लक्ष्मणकु घेनि संगतर ॥ १३१ ॥
अजोध्यापुरकु बुलि देखन्ति श्रीराम ।
घरे-घरे न छाड़न्ति कौशल्या नन्दन ॥ १३२ ॥
पिता शमशाने राम मिळिलेक जाइ ।
भरत आंगुळि घेनि दियन्ति देखाइ ॥ १३३ ॥

सेतु-बन्धन हुआ। वीर बालि किस प्रकार मरा —सभी का वर्णन करते हुए भगवान राघवेन्द्र ने हनुमानजी की प्रशंसा की। १२५ उन्होंने कहा कि हनुमान के कारण ही हमें वैदेही की प्राप्ति हुई। इन्होंने ही सागर के पार जाकर लंका में सीता का पता लगाया। १२६ इनके संदेश देने पर ही मैं सेना लेकर गया और रावण का वध करके जानकी को ले आया। १२७ यह सुन नगरनिवासियों ने हनुमान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए अरे! धन्य है यह एक वानर! ऐसा कहने लगे। १२८ इस प्रकार कथा-वार्ता करते-करते श्रीराम सो गये। सारी अयोध्या शान्त हो गई। १२९ रात्रि की समाप्ति पर शुभ शंखध्वनि सुनाई पड़ने लगी। धनुष-बाण लेकर श्रीराम शय्या से उठ पड़े। १३० नित्य-नैमित्तिक कार्यों से निवृत्त होकर भगवान रघुबीर हनुमान और लक्ष्मण को साथ लेकर अयोध्या भ्रमण के लिए निकल पड़े। कौशल्यानंदन ने कोई भी घर नहीं छोड़ा। १३१-१३२ श्रीराम पितृक श्मशान में जब पहुँचे तब भरत ने उँगली के संकेत से उन्हें पिताजी का श्मशान दिखा दिया। १३३

पिता शमशान बोलि शुणिले श्रीराम ।
अनेक रोदन कले कोदण्ड धारण ।। १३४ ।।
भरत प्रबोधि शोक शान्त कराइले ।
तहुँ जाइ जानकिक पुर से मिळिले ।। १३५ ।।
भोजन सारिण तहुँ शोइले श्रीराम ।
पाद तळे बसिलेक वीर हनुमान ।। १३६ ।।
ए समय जाहा हेला शुण गो पार्वती ।
बिलंका काण्डर कथा अटे दिव्य रीति ।। १३७ ।।
एथु अनन्तरे बहिगला पाञ्च दिन ।
अजोध्यापुररे सुखे रहिले श्रीराम ।। १३८ ।।
अभिषेक निमन्ते बशिष्ठ ब्रह्मजति ।
भरतकु सुमंत्रकु डकाइले कति ।। १३९ ।।
शत्रुघ्न सहिते पात्र घेनि मुनिवर ।
श्रीरामंक अभिषेक करन्ति विचार ।। १४० ।।
बशिष्ठ बोलन्ति हो सुमंत्र मंत्रीबर ।
अभिषेक निमन्ते जोगाड़ बेगे कर ।। १४१ ।।
नग्र मण्डिआअ पुरे घोषणा दिआअ ।
बन्धु बान्धवंकु बेगे गुआ चाळिदिअ ।। १४२ ।।

पिताजी के अंतिम संस्कार स्थल के विषय में सुनकर कोदण्डधारी राम नाना प्रकार से विलाप करने लगे । १३४ भरत ने समझा-बुझाकर उनका शोक-शांत किया । वहाँ से चलकर वह सीताजी के महल में जा पहुँचे । १३५ श्रीरामचन्द्र भोजन करने के पश्चात् वहाँ सो गए और वीर हनुमान उनके चरणों के समीप जा बैठे । १३६ हे पार्वती ! इस समय जो हुआ उसे श्रवण करो ! बिलंका काण्ड की कथा बड़ी दिव्य है । १३७ इसके अनंतर पाँच दिन बीत गये । अयोध्यापुर में श्रीराम बड़े सुख से रहे । १३८ ब्रह्मर्षि वशिष्ठ ने अभिषेक के सम्बन्ध में भरत और सुमन्त्र को अपने निकट बुलाया । १३९ फिर शत्रुघ्न और सामन्तों के साथ श्रीराम के राज्याभिषेक के विषय में विचार-विमर्श करने लगे । १४० वशिष्ठजी ने मंत्रियों में श्रेष्ठ सुमन्त्र को अभिषेक के लिए उपयुक्त सामग्री एकत्रित करने का आदेश देते हुए कहा कि सारे नगर को सुसज्जित करा कर घोषणा करा दो तथा बंधु-बान्धवों में निमंत्रण की सुपारी फिरा दो । १४१-१४२ मकर का महीना सब महीनों से उत्तम है । फिर शुक्ल

मकर मासए सबु मासरे उत्तम ।
अर्कवार पुण शुक्ल दुआदशी दिन ।। १४३ ।।
वाणिज्य करण जे अमृत नामे जोग ।
मकर संकरान्तिरु दश दिन भोग ।। १४४ ।।
ऐशान्ये जोगिनी अछि शुभ सेहि दिन ।
अभिषेक हेबे राम तेर घड़ी मान ।। १४५ ।।
शुणिण भरत वीर हरष होइला ।
अजोध्या नगरे जे घोषणा दिआइला ।। १४६ ।।
अजोध्यारे अभिषेक हेबे रघुबीर ।
बाट दाण्डे बसाइले बहुत बजार ।। १४७ ।।
नग्र लोके शुणि अति आनन्द होइले ।
जे जाहार पुरमान हस्ते मण्डाइले ।। १४८ ।।
नाना बिध पुष्पमाळा बान्धि घरे घरे ।
उछूळि पड़इ वाद्य अजोध्या नगरे ।। १४९ ।।
अभिषेक दिन जहुँ होइला प्रवेश ।
विविध उत्सव हेला से अजोध्या देश ।। १५० ।।
श्रीरामंक आज्ञा पाइ वशिष्ठ मिळिले ।
अभिषेक स्थाने बिजे हुअन्तु बोइले ।। १५१ ।।
शुणिण हरष हेले दशरथ चाट् ।
शिररे बाँधिले जाइ सुवर्ण मुकुट ।। १५२ ।।

पक्ष की द्वादशी को रविवार के दिन वाणिज्य करण अमृत नाम का योग है जो मकर संक्रान्ति से दस दिन पर्यन्त है । १४३-१४४ उस दिन ईशान में योगिनी शुभ है । तेरह घड़ी पर श्रीराम का अभिषेक होगा । १४५ यह सुनकर वीर भरत प्रसन्न हो गये तथा अयोध्यानगर में उन्होंने इसकी घोषणा करा दी । १४६ अयोध्या में श्री रघुवीर राम का अभिषेक होगा । गली-कूचों में भी बजारें लग गईं । १४७ नगरवासी यह सुनकर अत्यंत आनंदित हुए और अपने-अपने भवनों को अपने हाथों से सजाने लगे । १४८ प्रति घर-घर में विविध प्रकार की पुष्पमालाएँ बाँधी गईं । सम्पूर्ण अवधनगर विभिन्न वाद्य-यंत्रों से भर गया । १४९ और जब अभिषेक का दिन आ गया । उस दिन तो सारे अवध देश में नाना प्रकार के उत्सव मनाए गए । १५० श्रीराम की आज्ञा पाकर वशिष्ठ जी उनसे मिले और 'अभिषेक के स्थान पर चलिए' इस प्रकार कहने लगे । १५१ यह सुनकर दशरथनंदन को बड़ा हर्ष हुआ । उन्होंने जाकर शिर पर

नाना वर्ण पुष्पमाळ मुकुटे बाँधिले ।
मुकुट उपरे हीरा रतन खंजिले ॥ १५३ ॥
कर्णरे कुण्डळ झूले गळे मोति माळ ।
दो सरि पदक आणि खंजिले तहिर ॥ १५४ ॥
बाहुरे बाहुटि दिशे अति शोभावन ।
हृदये पइता दिशे सुवर्ण जेसन ॥ १५५ ॥
कटिरे काछेणि कन्धे विचित्र उत्तरी ।
कर रे कोदण्ड धरि प्रभु चापधारी ॥ १५६ ॥
शुभवेळा जाणि अनुकूळ करि गले ।
पात्र मित्र अमानात्य छन्ति तांक तुले ॥ १५७ ॥
मुदुसुली माने शुणि बेगे चळि गले ।
जानकी देविकि जाइ बेश कराइले ॥ १५८ ॥
बेगे स्नाहान कराइ कुण्डाइले केश ।
जुड़ा गुटे निर्माणि बाँधिले गभा पुष्प ॥ १५९ ॥
सुवेणी जटा मण्डळी आकारे खंजिले ।
माणिक्यरे झुम्पा जटमूळरे बाँधिले ॥ १६० ॥
कर्णरे ताटंक काप नासारे बेसर ।
बेनि नयने कज्जळ शिर रे सिन्दूर ॥ १६१ ॥

स्वर्ण-मुकुट बाँध लिया । १५२ मुकुट में नाना प्रकार की पुष्पमालाए बाँधकर उसके ऊपर हीरे तथा रत्न लगा लिये । १५३ उनके कानों में कुण्डल, गले में मोतियों की माला थी, जिसमें अन्य प्रकार के लटकन लाकर लगाये गये । १५४ बाहुओं में सुन्दर बाजूबन्द तथा हृदय में पड़े हुए यज्ञोपवीत से उनका वर्ण सुन्दर दिख रहा था । १५५ कमर में काछनी कन्धे पर विचित्र उत्तरीय था । धनुर्धारी राम ने हाथ में कोदण्ड उठा लिया । १५६ शुभ एवं अनुकूल वेला में वह वहाँ से चल दिये । पात्र मित्र, सभासद, अमात्य आदि उनके साथ लगे थे । १५७ यह सुनते ही शृंगार-कारिणी महिलाएँ चल दीं और उन्होंने जाकर जानकीजी का शृंगार कर दिया । १५८ शीघ्र ही स्नान कराकर उनके बाल झाड़े गये तथा एक जूड़ा बनाकर उसमें जवा पुष्प बाँध दिये । १५९ जटामण्डल के आकार की बँधी हुई चोटी के मूल भाग में माणिक्य के गुच्छे लगा दिये गये । १६० कानों में ताटंक तथा नाक में नथ पहना दी । दोनों नेत्रों में काजल और शिर में सिन्दूर लगा दिया गया । १६१ नासाग्र में बुला

नाशा से वसणी दिशे अति शोभावन ।
शरद चन्द्रमा परि दिशइ बदन ।। १६२ ।।
दोसरि मुकुता हार लम्बाइ गळारे ।
सुवर्ण पदक लम्बाइले हृदयरे ।। १६३ ।।
सुवर्णर बाजु बन्ध बाहुरे बाँधिले ।
बेनि हस्ते सुवर्णर कंकण खंजिले ।। १६४ ।।
विचित्र काञ्चला एक भिड़िले छातिरे ।
रुणुझुणु घागुड़ि जे बांधिले कटिरे ।। १६५ ।।
कुंकुम लेपिण अंग कले शोभावन ।
सुझीन बसन साड़ी पिन्धाइ बहन ।। १६६ ।।
नेत साड़ी ता उपुरे उपराण देले ।
बेनि चरणरे बेनि नुपुर खंजिले ।। १६७ ।।
सुबेश करिण अनुकूळ कराइले ।
आस्थानर उपरकू तहुँ घेनि गले ।। १६८ ।।
श्रीराम बिजय कले आस्थान उपरे ।
जानकींकि बसाइले आपणा कोळरे ।। १६९ ।।
हुळहुळि शबद पुरिला घन-घन ।
उछुळिला शंख भेरी शबदे गगन ।। १७० ।।
अभिषेक आस्थानरे बिजय श्रीराम ।
पात्र मंत्री माने आसि कले दरशन ।। १७१ ।।

अति मनोहर लग रही थी तथा उनका मुख शरद्-ऋतु के चंद्रमा के समान दिख रहा था । १६२ दो लड़ियों वाला मुक्ताहार, जिसमें स्वर्ण-पदक लगा हुआ था, उनके गले में डाल दिया गया । १६३ बाहुओं में सुनहरे बाजूबन्द तथा दोनों हाथों में स्वर्णकंकण पहना दिये गये । १६४ वक्षस्थल पर एक विचित्र कंचुकी तथा कमर में झुन-झुन करनेवाली तागड़ी पहना दी गई । १६५ कुमकुम-विलेपन से अंग और सुशोभित होने लगा । शीघ्र ही एक झीनी साड़ी उन्हें पहना दी गई । १६६ साड़ी के ऊपर एक मनोहर चादर उढ़ाकर दोनों चरणों में नूपुर पहना दिये गये । १६७ फिर मनोहर वेश-सज्जित करके जानकी को वहाँ से सिंहासन तक लाया गया । १६८ श्रीराम सिंहासन पर आसीन हो गये । उन्होंने जानकी को अपनी गोद में बिठा लिया । १६९ मांगलिक शब्द तथा शंख व भेरी के निनाद से आकाश-मण्डल गूंज उठा । १७० पात्र, सभासद तथा मंत्रियों

ईश्वर कहन्ति आगो शाकम्बरी शुण ।
अपूर्व चरित ए बिलंका रामायण ।। १७२ ।।
एक लय करिण तु शुण गो पार्वती ।
देवतांकु घेनि स्वर्गे बिजे सुरपति ।। १७३ ।।
ब्रह्मा वृहस्पति जम वरुण कुबेर ।
अग्नि नैर्ऋत आदि दश दिगपाळ ।। १७४ ।।
तैंतिस कोटि देवता होइछन्ति मेळि ।
ए समय अजोध्यारे शुभे हुळहुळि ।। १७५ ।।
पचारइ सुनासीर ब्रह्मा मुख चाहिं ।
अजोध्या नगरे आजि आनन्द किम्पाइं ।। १७६ ।।
विधाता बोइले आजि राम अभिषेक ।
तेणु हुळहुळि द्यन्ति अजोध्यार लोक ।। १७७ ।।
शुणि करि शचीनाथ आनन्द होइखे ।
विष्णुंकर अभिषेक देखिबा बोइले ।। १७८ ।।
देवता मानंकु घेनि बिजे सुनासीर ।
आरम्भ करिले सभा बारस्वती पुर ।। १७९ ।।
एसन समये जम देवता अइले ।
सभामध्ये शचीनाथ आगरे बोइले ।। १८० ।।

ने आकर अभिषेक-सिंहासन पर विराजमान श्रीराम के दर्शन किये । १७१ भगवान शंकर बोले, हे शाकम्बरी ! सुनो । यह बिलंका रामायण एक अपूर्व चरित्र है । १७२ हे पार्वती ! तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो । स्वर्ग में देवराज इन्द्र ब्रह्मा, वृहस्पति, यम, वरुण, कुबेर, अग्नि तथा नैर्ऋत आदि देवगणों के साथ विराजमान थे । १७३-१७४ वहाँ पर तेंतीस करोड़ देवगण एकत्रित थे । तभी अयोध्या में उठते हुए मांगलिक शब्दों की ध्वनि सुनकर इन्द्र ने ब्रह्मा के मुख की ओर ताककर प्रश्न किया कि आज अयोध्यानगर में मनाये जानेवाले आनंद का क्या कारण है ? १७५-१७६ ब्रह्माजी ने कहा कि आज राम का राज्याभिषेक है । इसी से अयोध्यावासी मंगल ध्वनि उच्चारण कर रहे हैं । १७७ यह सुन इन्द्र बहुत प्रसन्न हुए तथा विष्णु का अभिषेक देखेंगे, इस प्रकार कहने लगे । १७८ देवगणों के साथ देवराज इन्द्र विराजमान थे । स्वर्गपुरी में उन्होंने सभा की कार्यवाही आगे बढ़ाई । १७९ इसी समय यमराज सभा के मध्य में आकर इन्द्र के समक्ष क्रंदन करने लगे । १८० इन्द्र ने उनसे

इन्द्र पचारिले काँदुअछ काहिं पाईँ ।
जम बोइले मो अधिकारे कार्ज नाहिँ ॥ १८१ ॥
सर्प जन्तुक उपरे हेले अधिकार ।
बाड़ी ताटि खटिण मुँ मलि असुरर ॥ १८२ ॥
इन्द्र पचारिले कहाकु तु सेवा करु ।
विष्णु आज्ञा बहि आन लोके किम्पा डरु ॥ १८३ ॥
जम बोइला भो देव सावधाने शुण ।
एहि क्षणि आम्भ प्रभु बिलंका रावण ॥ १८४ ॥
ब्रह्मा बर पाइ से अटइ बळियार ।
एकाबेळे देले ताकु सहस्रेक शिर ॥ १८५ ॥
ब्रह्मा बोइले मोहर नाहिँ त आयत्त ।
सहस्रशिरा रावण लक्षेशिरा पुत्र ॥ १८६ ॥
बळे महा बळियार दनुज अटइ ।
सर्व देवतांकु नेइ पाद रे खटाइ ॥ १८७ ॥
मुहिँ जाइ वेद पढ़े प्रभात काळरे ।
मड़िआळ लुगा काछे कुबेर ता घरे ॥ १८८ ॥
बृहस्पति पांजि पढ़े जम बाड़ी तटि ।
अपसरामाने थान्ति नृत्य गीते खटि ॥ १८९ ॥

रोने का कारण पूछा । यमराज ने कहा कि अब कोई कार्य मेरे अधिकार में नहीं है । १८१ समस्त प्राणियों के ऊपर मेरा अधिकार होते हुए भी मैं असुरराज का दण्ड धारण करके चौकीदार का काम करते-करते मर गया । १८२ इन्द्र ने पूछा कि तुम किसकी सेवा करते हो ? विष्णु की आज्ञा पालन करने पर भी तुम किसी अन्य से क्यों डर रहे हो ? १८३ यमराज ने उत्तर देते हुए कहा, हे देवराज ! सावधान होकर सुनो । इस समय बिलंका रावण ही हम लोगों का स्वामी है । १८४ ब्रह्माजी से वर पाकर वह बहुत शक्तिशाली हो गया है । उन्होंने एक बार में ही उसे सहस्र सिर प्रदान किये हैं । १८५ ब्रह्माजी ने कहा, इसमें हमारा कुछ भी योग नहीं है । सहस्रशिरा रावण तो लक्षशिरा का पुत्र है । १८६ बल में वह दनुज महान शक्तिशाली है । सारे देवताओं को लेकर उसने अपनी चरण-सेवा में लगा लिया है । १८७ मैं प्रातःकाल से ही जाकर उसके यहाँ वेद-पाठ करता हूँ । कुबेर उसके घर में मैले वस्त्रों को स्वच्छ करता है । १८८ बृहस्पति उसके यहाँ पत्रा बाँचते हैं । यमराज बेंत लेकर चौकीदारी करते हैं । अप्सराएँ नृत्य-गीतादि में लगी

न जाणि कि सुनासीर दैत्य बळियार।
ताहार समान बळी नाहिं तिनि पुर ॥ १९० ॥
रावणकु मारि राम उश्वासिले लंका।
एका ए दइत्य पाइ लागे बड़ शंका ॥ १९१ ॥
वासव बोइले से केमन्ते जिब नाश।
रामंकु गुहारि जाइ कर हे त्रिदश ॥ १९२ ॥
विधाता बोइले राम एमन्ते न मारे।
मायारे उपाय कले अबा मारि पारे ॥ १९३ ॥
उपाय कर भो ब्रह्मा बोले सुनासीर।
श्रीराम न माइले न मरइ असुर ॥ १९४ ॥
अजोध्यारे राजा जेबे राघव होइबे।
बिलंकाकु काहिं पाइँ श्रीराम आसिबे ॥ १९५ ॥
जेमन्त आसन्ति बिलंकाकु रामराहु।
राजा हेले उपाय त न पाइबा आउ ॥ १९६ ॥
एहा शुणि वेदपति उपाय रचिले।
खळ दुर्बळकु राइ एमन्ते बोइले ॥ १९७ ॥
एहि क्षणि तुम्भे बेनि अजोध्याकु जिब।
जाइण जानकि देवी कण्ठ रे बसिब ॥ १९८ ॥

रहती हैं। १८९ हे सुरेन्द्र ! क्या आपको नहीं मालूम है कि वह दैत्य तीनों लोकों में महान शक्तिशाली है। उसके समान अन्य कोई नहीं। १९० रावण को मारकर श्रीराम ने लंका का उद्धार कर दिया, किन्तु अकेले इस दैत्य के लिए मुझे बड़ी शंका हो रही है। १९१ इन्द्र ने कहा कि इसका विनाश किस प्रकार से होगा ? सभी देवगण जाकर श्रीराम के पास गुहार लगावें। १९२ ब्रह्मा ने कहा कि श्रीराम उसे ऐसे नहीं मारेंगे। माया के द्वारा उपाय करने पर वह उसे भले ही मार सकें। १९३ देवराज इन्द्र ने कहा, हे ब्रह्मा ! आप ही कुछ उपाय करें क्योंकि बिना श्रीराम के वह असुर मर ही नहीं सकता। १९४ जब श्रीराम अयोध्या के राजा बन जायँगे तो वह बिलंका को किसलिए जायेंगे ? १९५ जैसे भी हो श्रीराम रूपी राहु बिलंका में प्रवेश करें अन्यथा राजा बन जाने से और कोई उपाय नहीं मिल पायेगा। १९६ यह सुनकर ब्रह्माजी ने एक उपाय रचा। उन्होंने खल और दुर्बल को बुलाकर इस प्रकार कहा। १९७ तुम दोनों लोग इसी क्षण अयोध्या को जाओ तथा वहाँ पहुँचकर श्रीजानकी जी के कण्ठ में बैठ जाना। १९८ जिससे सीताजी

जेमन्ते रामंकु झिंगासिबे बइदेही ।
जेमन्ते आसिबे बिलंकाकु रघुसाइँ ॥ १९९ ॥
देवकार्ज कर तुम्भे बेगे चळि जाअ ।
अजोध्या नगरे जाइ खळ जे भिआअ ॥ २०० ॥
ब्रह्मांकर वाक्ये खळ दुर्बळ जे दुइ ।
राम अभिषेक स्थाने प्रवेशिले जाइँ ॥ २०१ ॥
जानकी देविक कण्ठे खळ बिजे कला ।
दुर्बळ जे श्रीरामंक कण्ठरे बसिला ॥ २०२ ॥
अजोध्या नगर जन मानंकु मोहिला ।
दुण्दुभी शबद नादे पृथ्वी चमकिला ॥ २०३ ॥
वशिष्ठ जाबाळि जाज्ञबल्क्य बामदेव ।
अछन्ति अंगिरा अष्टावक्र आदि सर्व ॥ २०४ ॥
चामर ढळन्ति धीरे भरत शत्रुघ्न ।
छत्र धरि आगे उभा होइछि लक्ष्मण ॥ २०५ ॥
वेद वाक्य पढ़न्ति बशिष्ठ ब्रह्मजति ।
पात्र मित्र अमात्ये जे बेढ़ि बसिछन्ति ॥ २०६ ॥
एसन समये देवी पार्वती गो शुण ।
खळ जहुँ मोहिलाक श्रीरामंक मन ॥ २०७ ॥

श्रीराम का उपहास करें और जैसे भी हो रघुश्रेष्ठ राम बिलंका को चल दें। १९९ तुम लोग शीघ्र ही जाकर देवताओं का कार्य करो और अयोध्यानगर में इस प्रकार के षड्यंत्र की रचना कर डालो। २०० ब्रह्माजी की आज्ञा से खल तथा दुर्बल दोनों ही श्रीराम के अभिषेक-स्थल पर जा पहुँचे। २०१ खल श्री सीताजी के और दुर्बल श्रीराम के कंठ में बैठ गया। २०२ अयोध्यानगरी जनमानस को मोहित कर रही थी। दुन्दुभि-नाद के शब्द से पृथ्वी प्रकम्पित हो रही थी। २०३ वशिष्ठ, जाबालि, याज्ञवल्क्य, बामदेव, अंगिरा तथा अष्टावक्र आदि सभी वहाँ उपस्थित थे। २०४ धीरे-धीरे भरत और शत्रुघ्न चँवर डुला रहे थे। लक्ष्मण छत्र पकड़कर आगे खड़े हुए थे। २०५ ब्रह्मर्षि वशिष्ठ वेदमंत्र पढ़ रहे थे और सभासद, मित्र तथा मंत्री सभी उन्हें घेरकर बैठे थे। २०६ हे देवी पार्वती! सुनो। इसी समय खल ने श्रीराम का मन मोहित कर लिया। २०७ वशिष्ठजी की ओर देखकर

वशिष्ठंकु चाहिं बोलुछन्ति रघुवीर ।
अनेक कष्टरे मुहिं माइलि असुर ॥ २०८ ॥
पर्वत बुहाइ सिन्धु मध्ये कलि बन्ध ।
दुर्वार समर कला राजा दशकन्ध ॥ २०९ ॥
अनेक कष्टरे मला राजा लंक साइँ ।
शुणि उपहास करि बोलन्ति बैदेही ॥ २१० ॥
कार्ज न करिण किम्पा प्रशंसि हेउछ ।
केउँ दिन रावणकु तुम्भे मारिअछ ॥ २११ ॥
ताहा शुणि रघुनाथ होइले मउन ।
हनुकु चाहिण आज्ञा देले रघुनान ॥ २१२ ॥
हे बाबु चन्दन काष्ठ आण बेगे जाइ ।
जेमन्त ए अभिषेक बेळा न गड़इ ॥ २१३ ॥
श्रीरामंक आज्ञा पाइ चळे हनुबीर ।
अजोध्या नगर मध्यु होइला बाहर ॥ २१४ ॥
प्रवेश होइला जाइ चन्दन गिरिरे ।
खोजइ चन्दन वृक्ष पर्वत उपरे ॥ २१५ ॥
एसन समय देवी पार्वती गो शुण ।
खळ जे उच्चाट कला जानकींक मन ॥ २१६ ॥
श्रीराम कहन्ति दुःख वशिष्ठ आगरे ।
अतिकष्टे असुरंकु माइलि लंकारे ॥ २१७ ॥

रघुवीर श्रीराम ने कहा कि अनेक कष्ट से मैंने असुर का वध किया था। २०८ सागर में पर्वत डालकर मैंने बाँध बनवा दिया। राजा दशानन ने बड़ा ही घोर युद्ध किया। २०९ लंकेश्वर रावण बड़ी कठिनाई से मर पाया। यह सुनकर जानकीजी उपहास करती हुई बोलीं। २१० कार्य न करके आप किसलिए प्रशंसा प्राप्त करना चाहते हैं। आपने किस दिन रावण को मारा है? २११ इसे सुनकर रघुनाथजी मौन हो गये। फिर हनुमान की ओर देखकर रघुश्रेष्ठ राम ने आज्ञा दी। २१२ हे भाई! तुम शीघ्र ही जाकर चंदन-काष्ठ ले आओ, जिससे यह अभिषेक का समय न टल जाय। २१३ श्रीराम की आज्ञा पाकर महावीर हनुमान चल दिये और अयोध्यानगर से बाहर हो गये। २१४ मलयागिरि पर पहुँचकर वह पर्वत के ऊपर चन्दन-वृक्ष खोजने लगे। २१५ हे देवी पार्वती! सुनो। इसी समय खल ने श्री जानकीजी का मन उचाट कर दिया। २१६ श्रीराम दुख के साथ वशिष्ठ के सामने कहने लगे कि

हसिण जानकी देवी बोलन्ति एसन ।
रावणकु बध कल कह केउँ दिन ॥ २१८ ॥
श्रीराम बोइले सती होइलु कि बाइ ।
भूलिगलु कि असुर घरे थिलु रहि ॥ २१९ ॥
सुबळया पर्वतर जेतेक वृत्तान्त ।
न जाणुकि तहिं जुद्ध कला लंकनाथ ॥ २२० ॥
कुम्भकर्ण आदि महिरावण सहिते ।
मोर शराघाते रणे पड़िले समस्ते ॥ २२१ ॥
रावण सहित सबु दैत्य मले रणे ।
स्वर्णमय लंकापुर ध्वंस कलि बाणे ॥ २२२ ॥
जानकी बोइले प्रभु प्रतिज्ञा न कर ।
मुहिँ न माइले काहुँ मरन्ता असुर ॥ २२३ ॥
तुम्भे किबा कष्ट पाइ अछ रघुराण ।
घोर कष्ट पाइण मुँ माइलि रावण ॥ २२४ ॥
एसन प्रतिज्ञा जेबे अछि रघुसाइँ ।
बिलंकार रावणकु बध कर जाइ ॥ २२५ ॥
सहस्रक शिर बहे प्रतापी असुर ।
दशशिर नाशि किबा प्रतिज्ञा तुम्भर ॥ २२६ ॥

अत्यन्त कष्ट से मैंने उन असुरों को लंका में मारा। २१७ इसी समय जानकीजी हँसकर बोलीं कि बताओ तुमने कब और किस दिन रावण को मारा था ? २१८ श्रीराम ने कहा कि सीता क्या तुम पागल हो गई ? क्या तुम भूल गई कि तुम असुर के घर रही थीं ? २१९ क्या तुम सुबेल पर्वत के समाचार नहीं जानतीं जहाँ पर लंकापति रावण ने युद्ध किया था ? २२० महिरावण समेत कुम्भकर्ण आदि सभी मेरे बाणों के आघात से रणस्थल में मारे गये। २२१ युद्ध में रावण-सहित सारे दैत्य मारे गये। मैंने अपने बाणों से स्वर्णमयी लंका नगरी को ध्वंस कर डाला था। २२२ जानकी ने कहा, प्रभु ! आप ऐसी बातें न करें। मेरे न मारने से क्या रावण मर सकता था। २२३ हे राघवेन्द्र ! आपने क्या कष्ट पाया है ? घोर कष्ट सहन करके मैंने रावण को मारा था। २२४ हे रघुश्रेष्ठ ! यदि ऐसी ही बात है तो आप जाकर बिलंका के रावण का वध करें। २२५ उस प्रतापी असुर के एक हजार सिर हैं। दस सिर को नष्ट करने में आपका क्या बड़प्पन है ? २२६ सारे देवता उस असुर

देवताए असुरर आस्थान तळरे ।
दिन राति खटु थान्ति भृत्य पर कारे ।। २२७ ।।
बाड़िद्वारे जम राजा अछि जगुआळ ।
कुबेर देवता तार काचइ महळ ।। २२८ ।।
देवकार्ज हेबो जेबे आहे रघुसाइँ ।
बिलंका देशकु ध्वंस कर बेगे जाइँ ।। २२९ ।।
श्रीराम बोइले तुम्भे थाअ अन्तःपुरे ।
केमन्ते जाणिल एहा कह मो आगरे ।। २३० ।।
जानकी बोइले बापघरे थिबा काळे ।
एक ऋषि आसि चतुर्मास्या व्रत कले ।। २३१ ।।
पितांक आज्ञारे तांक सेवा कलि मुहिं ।
सन्तोष होइण मुनि मोते थिले कहि ।। २३२ ।।
तांक मुखुँ शुणिथिलि रावण वृत्तान्त ।
ताहांकु माइले वीरपण हेबो ख्यात ।। २३३ ।।
खळ जेणु मोहि अछि जानकींक मन ।
अनेक झिंघासि तांकु बोइले बचन ।। २३४ ।।
शुणि क्रोधे थरहर हेले रघुबीर ।
कह सह केउँ ठारे बिलंका नगर ।। २३५ ।।

के सिंहासन के नीचे दिन-रात नौकर की भांति कार्य में जुटे रहते हैं । २२७ घर के द्वार पर यमराज द्वारपाल का कार्य करते हैं तथा कुबेर देवता उसका महल स्वच्छ करते हैं । २२८ हे राघव ! यदि आप शीघ्र ही बिलंका जाकर उस देश को ध्वंस कर दें तो देवताओं का बड़ा उपकार हो जायगा । २२९ श्रीराम बोले कि तुम तो अन्तःपुर में रहती हो। तुमने यह सब कैसे जाना ? यह सब मेरे समक्ष कहो । २३० जानकी ने कहा, जिस समय मैं अपने पिता के घर में थी तभी एक ऋषि ने आकर वहाँ चतुर्मासा का व्रत किया । २३१ पिता की आज्ञा से मैंने उनकी सेवा की। तब मुनि ने संतुष्ट होकर यह मुझसे कहा था । २३२ उनके मुख से मैंने रावण का वृत्तान्त सुना था। उसका वध करने से आपकी वीरता विख्यात होगी । २३३ खल ने जानकी का मन मोहित कर लिया था, इसी कारण उन्होंने श्रीराम से इस प्रकार के मर्म-वेधी वचन कहे । २३४ यह सुनकर रघुवीर क्रोध से थर्रा उठे तथा बोले, तुम सच कहो कि बिलंका नगर कहाँ है ? २३५ मैं एकाकी ही जाकर दैत्य का संहार करूँगा ।

ए काके जे दइत्यकु करिबि संहार ।
देवंक बइरी जेहु बइरी मोहर ।। २३६ ।।
प्रतिज्ञा करुछि तुम्भ आगे बइदेही ।
बिलंका नगरे वुलाइबि लुहामही ।। २३७ ।।
जानकी बोइले लंका ठारु शते जुण ।
अछइ सहस्र शिरा नामेण रावण ।। २३८ ।।
सप्तशिरा मंत्री तार त्रिशिरा जे भाइ ।
शत शिरा पुत्र तार बळिष्ठ अटइ ।। २३९ ।।
शुणिण श्रीराम जे होइले कम्पमान ।
उठिले कोदण्ड घेनि प्रभु रघुनान ।। २४० ।।
अजोध्यार लोके शुणि कले हाहाकार ।
के बोलेइ बिलंकाकु जिबे रघुवीर ।। २४१ ।।
के बोले एहि कथाकु के कला भिआण ।
के बोले भिआइछन्ति सीता देवी पुण ।। २४२ ।।
खळ जेणु समस्तंक मन अछि मोहि ।
काहारि मुखरु जे समस्या न आसइ ।। २४३ ।।
स्तम्भीभूत होइछन्ति सकळ सइन्य ।
माता माने शुणि पुणि होइले मउन ।। २४४ ।।

जो देवताओं का शत्रु है, वह मेरा भी बैरी है । २३६ हे सीते ! मैं तुम्हारे आगे प्रतिज्ञा करता हूँ कि बिलंकानगर में लोहे की सिरावन चला दूँगा । २३७ जानकीजी ने कहा कि लंका से भी सौ योजन आगे सहस्र सिर वाला रावण है । २३८ सप्तशिरा उसका मंत्री तथा त्रिशिरा उसका भाई है । उसका पुत्र शतशिरा बहुत बलवान है । २३९ यह सुनकर श्रीराम क्रोध से काँपने लगे और राघवेन्द्र कोदण्ड लेकर उठ पड़े । २४० यह सुनकर अयोध्यानिवासी हाहाकार करने लगे । कोई कहता था कि श्री रघुवीर बिलंका के लिए प्रस्थान करेंगे । २४१ कोई कहता था कि इस कहानी की रचना किसने की । किसी ने कहा कि यह तो सब सीता देवी की ही सृष्टि है । २४२ क्योंकि खल ने सभी का मन सम्मोहित कर रखा था, इसी कारण किसी के मुख से समस्या का निराकरण नहीं हो पा रहा था । २४३ सारी सेना स्तम्भीभूत हो गयी और माताएँ यह सुनकर मौन हो गईं । २४४ चक्रधारी प्रभु ने वशिष्ठ को प्रणाम करके

वशिष्ठंक ओळगिण प्रभु चक्रधर ।
बोइले बिलंका जिबि आहे मुनिवर ॥ २४५ ॥
किछिन कहिण मुनि होइले मउन ।
कर जोड़ि श्रीरामंकु कहिले लक्ष्मण ॥ २४६ ॥
एकाके किम्पाइँ जिब आहे चक्रधर ।
मुहिं संगे जिबि बोलि होइले बाहार ॥ २४७ ॥
श्रीराम बोइले बाबू थाअ अजोध्यारे ।
केते कष्ट पाइबु तु मोहर संगरे ॥ २४८ ॥
भरत बोइला देव जिबि दण्ड घेनि ।
अजोध्या सम्भाळ एहा कहि रघुमणि ॥ २४९ ॥
मातामानंकु प्रणमि होइले बाहार ।
जानकींकि मुख चाहिं प्रभु रघुबीर ॥ २५० ॥
बोइले गो सती माता पादे खटु थिबु ।
काहारि संगरे कळि द्वन्द्व न करिबु ॥ २५१ ॥
सर्वमंगळा सुमिरि श्रीरघुनन्दन ।
रथ गज तेजि पादे करन्ति गमन ॥ २५२ ॥
तहुँ सिंहद्वारे जाइँ हेले रघुमणि ।
देवताए स्वर्ग पुरे कले शंखध्वनि ॥ २५३ ॥
स्वर्गे थाइ पुष्प वृष्टि कले सुनासीर ।
से समये वेद ध्वनि कले वेद वर ॥ २५४ ॥

कहा कि हे मुनिराज ! मैं बिलंका जाऊँगा । २४५ महर्षि कुछ न कहकर चुप हो गये । हाथ जोड़कर लक्ष्मण ने श्रीराम से निवेदन किया । २४६ हे चक्रधारी ! आप ही अकेले क्यों जायेंगे । मैं भी साथ चलूँगा । यह कहकर बाहर निकल पड़े । २४७ श्रीराम ने कहा कि भाई ! तुम अयोध्या में रहो । तुम मेरे साथ कितना कष्ट झेलोगे । २४८ भरत ने कहा, हे देव ! मैं दण्ड लेकर जाऊँगा । रघुमणि रामचंद्र उन्हें अयोध्या को सम्हालने के लिए कहा । २४९ माताओं को प्रणाम करके बाहर निकल पड़े । प्रभु रघुवीर ने सीता के मुख की ओर देखकर कहा । २५० उन्होंने सीतादेवी से कहा, हे सती ! माताओं के चरणों की सेवा करते रहना । किसी के साथ लड़ाई-झगड़ा मत करना । २५१ श्री रघुनंदन सर्व-मंगला का स्मरण करके रथ और हाथी छोड़कर पैदल ही चल दिये । २५२ रघुकुल में श्रेष्ठ श्रीराम जी वहाँ से सिंहद्वार पर जा पहुँचे । देवताओं ने स्वर्ग से शंख-ध्वनि की । २५३ स्वर्ग से ही देवराज इन्द्र ने पुष्प-वर्षा की

वृहस्पति अनुकूळ बेल जणाइले ।
कर जोड़ि देवगणे स्तुति आरम्भिले ॥ २५५ ॥
आकाशुं मंगळ ध्वनि शुभे घन घन ।
पृथ्वी उश्वास आजि करिबे श्रीराम ॥ २५६ ॥
पवनकु चाहिं आज्ञा देले वेदवर ।
देवतामानंक कार्ज कर हे समीर ॥ २५७ ॥
केते दिन बिलंकाकु जिबे रघुसाइँ ।
गगन मार्गरे निअ ताहांकु उड़ाइ ॥ २५८ ॥
ब्रह्मांक बचने जे समीर चळि गला ।
अणचास मूर्ति एक होइण बहिला ॥ २५९ ॥
सधीरे सधीरे जहुँ बहिला समीर ।
धीरे धीरे चालि गले से कोदण्डधर ॥ २६० ॥
गगन मार्गरे निये पवन उड़ाइ ।
भोळे गगनरे चळिजान्ति रघुसाइँ ॥ २६१ ॥
कहुँ कहुँ रामचन्द्र शुन्य मार्ग गले ।
बिलंकारे तांकु नेइ पवन छाड़िले ॥ २६२ ॥
प्रचण्ड नामरे अछि एकइ पर्वत ।
से गिरि उपरे मिळिले ये रघुनाथ ॥ २६३ ॥

तथा ब्रह्माजी ने वेद-मंत्र उच्चारण किये । २५४ बृहस्पति के द्वारा शुभ-वेला के संकेत पर देवताओं ने हाथ जोड़कर स्तुति आरम्भ कर दी । २५५ आकाशमण्डल से घनघोर मंगल-ध्वनि सुनाई पड़ने लगी । आज श्रीराम पृथ्वी का उद्धार करेंगे, ऐसा सुन पड़ा । २५६ पवनदेव की ओर देखकर ब्रह्मा ने कहा कि हे समीर ! तुम देवताओं का कार्य करो । २५७ रघुनाथजी कितने दिन में बिलंका पहुँचेंगे। उन्हें आकाश-मार्ग से उड़ा कर ले जाओ । २५८ ब्रह्माजी के कहने पर पवनदेव वहाँ से चल पड़े और उनचासों पवन एक होकर बहने लगे । २५९ जब पवन सतर्कता से बहने लगो तो कोदण्डधारी राम भी धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे । २६० उन्हें वायु आकाश-मार्ग से ले जा रही थी । रघुनाथजी विभोर हुए आकाश-मार्ग से चले जा रहे थे । २६१ कहते-कहते रामचंद्र शून्य-मार्ग में पहुँच गये । पवन देव ने उन्हें बिलंका में ले जाकर छोड़ दिया । २६२ वहाँ प्रचण्ड नाम का एक पर्वत था । रघुनाथजी उसी पहाड़ पर पहुँच गये । २६३ उन्होंने दक्षिण

दक्षिण दिगकु दृष्टि कले रघुराण ।
बिलंका नगर सबु दिशइ सुवर्ण ॥ २६४ ॥
ताहार पाचेरी उच्च अटे नवताळ ।
एकविंश ताळ उच्च जगतीर चाळ ॥ २६५ ॥
द्विलक्ष जोजन अटे तार आयतन ।
चारिकति बिराजुछि रजत सुवर्ण ॥ २६६ ॥
विहरन्ति राक्षसे जे शस्त्र मान धरि ।
पर्वतु समान दिशुछन्ति दुराचारी ॥ २६७ ॥
चारि दिगे शोभा पाये चारि सिंहद्वार ।
जगिछन्ति चारि चारि सहस्र असुर ॥ २६८ ॥
अति मनोहर दिशे बिलंका भुवन ।
देखिण प्रशंसा कले प्रभु रघुनान ॥ २६९ ॥
धन्य रे बिलंका राजा धन्यरे तो पुरी ।
अकारणे हेलु किम्पा देवंक बइरी ॥ २७० ॥
तोते माइलेटि मोर प्रतिज्ञा रहिब ।
पृथ्वीर भाराभर उश्वास होइब ॥ २७१ ॥
एते बोलि कोप भरे कोदण्ड धारण ।
पादुका मंत्रकु देव कले सुमरण ॥ २७२ ॥

दिशा की ओर दृष्टि डाली । सम्पूर्ण बिलंकानगर स्वर्णमय दिखाई पड़ने लगा । २६४ उसकी चहारदीवारी की ऊँचाई नौ ताल के वृक्षों के बराबर थी । भवन की छत की ऊँचाई इक्कीस ताल वृक्षों के बराबर थी । २६५ उसका आयतन दो लाख योजन था और चारों ओर सोना व चाँदी शोभा पा रही थी । २६६ शस्त्र लेकर राक्षसगण विचरण कर रहे थे । वह दुराचारी पर्वत के समान दिखाई दे रहे थे । २६७ चारों दिशाओं में चार सिंहद्वार शोभा पा रहे थे, जहाँ पर चार-चार हजार असुर रखवाली में लगे थे । २६८ बिलंकानगर अत्यंत मनोहर दिखाई दे रहा था । उसे देखकर रघुनाथजी ने बहुत प्रशंसा की । २६९ बिलंकेश्वर ! तुम धन्य हो और तुम्हारी नगरी भी धन्य है । तुम अकारण ही देवताओं के शत्रु कैसे बन गये । २७० तुम्हारा वध करने से मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण होगी । पृथ्वी भार मुक्त हो जायेगी । २७१ इतना कहकर कोदण्डधारी राम ने कुपित होकर पादुका-मंत्र का स्मरण किया । २७२ वह उसी क्षण उत्तर द्वार पर

ततक्षणे उत्तर द्वारे मिळिलेक जाइँ ।
द्वारे देश आबोरिण दैत्य छन्ति रहि ॥ २७३ ॥
धनुहुळे गुण देइ जोचि पंचबाण ।
ओटारिण छाड़ि देले प्रभु रघुराण ॥ २७४ ॥
दुइसस्र निशाचर द्वारे बसिथिले ।
बेनि खण्ड करि तांकु काटि पकाइले ॥ २७५ ॥
भितरे पशिले प्रभु रघुकुळ साइँ ।
सुवर्ण पाचेरी परे उठिलेक जाइँ ॥ २७६ ॥
देखिले आस्थान परे बसिछि असुर ।
मणिमा मणिमा डाक शुभे घनघोर ॥ २७७ ॥
देवताए खटुछन्ति किंकर समान ।
तेवताँक कष्ट देखि श्रीरघुनन्दन ॥ २७८ ॥
क्रोध भरे बारम्बार टंकारिले धनु ।
प्रज्ज्वळित अग्नि तुल्य दिशे तार तनु ॥ २७९ ॥
धनुर टंकार शब्दे कम्पे तीनिपुर ।
शुणिण बिलंकापुर हेला थर हर ॥ २८० ॥
रे रे कार ध्वनि करि डाकिले श्रीराम ।
आरे रे पापिष्ठ दैत्य बिलंका राजन ॥ २८१ ॥
पारिले तु धनु धरि कर रे समर ।
अकंटक राज्य भोग करु रे पामर ॥ २८२ ॥

जा पहुँचे । जहाँ दैत्यगण भरे पड़े थे । रघुनाथजी ने धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर पाँच बाण संधान करके अचानक ही छोड़ दिये । २७३-२७४ दो हजार निशाचर द्वार पर बैठे थे । उन्हें दो खण्डों में काटकर गिरा दिया । २७५ फिर रघुकुल के स्वामी श्रीराम भीतर घुसे और सुनहरी चहारदीवार के आगे पहुँच गये । २७६ उन्होंने असुर को सिंहासन पर बैठे हुए देखा । महाराज ! महाराज ! का घनघोर रव सुनाई पड़ रहा था । २७७ देवता सेवक की भाँति सेवा में लगे थे । देवगण के कष्टों को देखकर श्रीरघुनन्दन ने क्रुद्ध हो बारम्बार धनुष पर टंकार दी । प्रज्ज्वलित अग्नि के समान उसका शरीर दिखाई पड़ रहा था । २७८-२७९ धनुष की टंकार के शब्द से तीनों लोक काँप उठे और उस शब्द को सुनकर बिलंकानगर में खलबली मच गई । २८० श्रीराम ने उपेक्षा के स्वर में कहा, रे पापिष्ठ दैत्य ! बिलंकानरेश ! इधर आ । २८१ तुझमें सामर्थ्य

देवता मानंकु किम्पा बाँधिलु पादरे ।
सवंशरे पठाइबि तोते जमपुरे ॥ २८३ ॥
मुहिँ अटे दशरथ राजांक नन्दन ।
परशुरामंक गर्व करिछि गंजन ॥ २८४ ॥
बाळि मारि सुग्रीवकु देलि राज्यभार ।
रावणकु मारि ध्वंस कलि लंकापुर ॥ २८५ ॥
तोते मारिबाकु मोर बळि अछि मति ।
सहस्रे शिरकु मारि रखिबि कीरति ॥ २८६ ॥
एहा शुणि सभा लोके हेले चमत्कार ।
द्विसहस्र नयनरे चांहिला असुर ॥ २८७ ॥
मंत्रीकि पुच्छिला कह कि कहुछि से ही ।
चार जणाइला जुद्ध माँगुछि गोसाइँ ॥ २८८ ॥
शुणि उपहासकला प्रतापी असुर ।
बोइला मो संगे एहि करिब समर ॥ २८९ ॥
एते बोलि कर ताळि देला लंक साइँ ।
करताळि बात घात श्रीरामे लागइ ॥ २९० ॥
करताळि बातरे कि आकाश भाँगिला ।
सम्भाळि न पारिले ता कौशल्यार बळा ॥ २९१ ॥

हो तो धनुष लेकर मुझसे युद्ध कर। अरे नीच ! तू अकंटक राज्य-सुख भोग रहा है। २८२ देवताओं को तूने अपने चरणों में क्यों बाँध रखा है ? मैं तुझे वंश-सहित यमपुर भेज दूँगा। २८३ मैं राजा दशरथ का पुत्र हूँ। मैंने परशुराम का दर्प चूर-चूर कर दिया है। २८४ मैंने बालि को मारकर सुग्रीव को राज्य-भार प्रदान किया है। रावण का वध करके मैंने लंकापुरी को ध्वंस किया है। २८५ तेरा वध करने की मेरी इच्छा हो रही है। सहस्र-शीश को मार कर मैं यश अर्जन करूँगा। २८६ यह सुनकर सारे सभासद आश्चर्यचकित हो गये। दैत्यराज दो हज़ार नेत्रों से ताकने लगा। २८७ उसने मंत्री से प्रश्न किया कि बोलो यह क्या कह रहा है ? तभी दूत ने कहा, हे स्वामी ! यह युद्ध की याचना कर रहा है। २८८ यह सुनकर प्रतापी असुर उपहास करता हुआ बोला कि यह मेरे साथ युद्ध करेगा। २८९ इतना कहकर बिलकेश्वर ने ताली बजाई, जिसकी ताली की हवा के आघात का प्रभाव श्रीराम पर पड़ा। २९० मानों ताली की हवा के आघात से आकाश ही टूट पड़ा हो। कौशल्यानंदन उस आघात को सम्हाल न सके। २९१

उड़िले गगनमार्गे से रघुनन्दन ।
कहुँ कहुँ उड़िगले सतुरि जोजन ॥ २९२ ॥
उड़ि उड़ि श्रीराम जे पडिले भुमिरे ।
चेतना पाइले पुणि किछिक्षण परे ॥ २९३ ॥
उठिण श्रीरामचन्द्र होइले मउन ।
केडे बड़ कर्म कला बिलंका राजन ॥ २९४ ॥
कोदण्ड पकाइ देले कमाळरे कर ।
आपणाकु निन्दा कले रघुकुळ वीर ॥ २९५ ॥
धिक मोर राम नाम धिक पराक्रम ।
किम्पाइँ मु मर्त्य पुरे होइलि जनम ॥ २९६ ॥
केमन्ते ए नाश जिब दुर्वार दइत्य ।
एते बोलि जोगासने बसि रघुनाथ ॥ २९७ ॥
घोर तपस्यारे मग्न हेले चापधारी ।
एहा देखि कम्पमान हेला स्वर्गपुरी ॥ २९८ ॥
एथु अनंतर आगो शुण हैमवती ।
ए ग्रन्थ शुणिले निश्चें होइब मुकति ॥ २९९ ॥
एकमने जेउँ प्राणी एहाकु शुणइ ।
पातक बिनाश हुए स्वर्ग बसे सेहि ॥ ३०० ॥
अन्ध चक्षु दान पाए शुणि ए पुराण ।
दरिद्र शुणिले हादे लभे बहुधन ॥ ३०१ ॥

रघुनन्दन उससे आकाश में उड़ गये और बात ही बात में वह सत्तर योजन दूर उड़ गये। २९२ श्रीराम उड़ते हुए पृथ्वी पर गिर पड़े। उन्हें कुछ क्षणों के उपरान्त चेतना आई। २९३ श्रीरामचन्द्र उठकर मौन हो गये। बिलवेश्वर ने कितना बड़ा कार्य कर डाला। २९४ रघुवंश में वीर श्रीराम कोदण्ड को फेंक अपने सिर पर हाथ रखकर स्वयं अपनी ही निंदा करने लगे। २९५ मेरे राम नाम को धिक्कार है। मेरे पराक्रम को भी धिक्कार है। मेरा जन्म ही मृत्युलोक में क्यों हुआ ? २९६ किस प्रकार इस दुर्दान्त दैत्य का विनाश होगा ? यह कहकर धनुर्धारी रघुनाथ योगासन में बैठकर कठिन तपस्या में मग्न हो गये। यह देखकर स्वर्गपुरी कम्पित हो उठी। २९७-२९८ हे हिमाचलनन्दिनी ! इसके अनन्तर सुनो। इस ग्रंथ के सुनने से निश्चय ही मुक्ति प्राप्त होगी। २९९ जो प्राणी इस कथा को एकाग्रचित्त से सुनता है, उसके पाप नष्ट हो जाते हैं और वह स्वर्ग का अधिकारी बन जाता है। ३०० इस पुराण को सुनने से

रामायण ग्रन्थ एहु रस मध्ये सार ।
एक लक्षे शुणिले जे होइब निस्तार ।। ३०२ ।।
श्री हिंगुळांक आज्ञारे करइ लिखन ।
दोष मोर न धरिब हे पण्डित जन ।। ३०३ ।।
से जाहा कहन्ति मोते मुँ ताहा लेखइ ।
मुर्ख अपण्डित मुहिं ज्ञान मोर नाहिं ।। ३०४ ।।
श्रीराम चरित ए अपूर्व ग्रन्थसार ।
श्रीराम सुमर नरे भवु हुअ पार ।। ३०५ ।।
श्रीरामंक नाम गोटि निरन्तरे घोष ।
से रामे शरण नित्ये ए शारळादास ।। ३०६ ।।

हनूर बिलंका आगमन ओ विषपानरे मृत्यु पवन द्वारा पुनर्जीवन प्राप्ति

एथु अनन्तरे देवी पार्वती उठिले ।
शूळपाणिकर बेनि चरण धइले ।। १ ।।
बोइले मुकति मोते कर सुरराण ।
बुझाइ कहन्तु मोते एहि रामायण ।। २ ।।
घोर तप आरम्भि बोसिले रघुनाथ ।
तदन्ते कि हेला कह आहे प्राणनाथ ।। ३ ।।

अन्धे को आँखें मिल जाती हैं। दरिद्र को सहसा बहुत धन की प्राप्ति हो जाती है। ३०१ यह रामायण का ग्रंथ रसों में सार-रूप है। इसे एकाग्रचित्त से सुनने से मनुष्य तर जाता है। ३०२ श्री हिंगुलादेवी की आज्ञा से मैं लिख रहा हूँ। हे विद्वान् पुरुषो! मुझे दोष न देना। ३०३ वह जो भी मुझसे कहती है मैं वह ही लिखता हूँ। मैं तो मूर्ख तथा अज्ञानी हूँ। मेरे पास ज्ञान भी नहीं है। ३०४ श्रीराम का अद्भुत चरित्र ही इस ग्रंथ का सार है। हे प्राणी! श्रीराम का स्मरण करके संसार से पार हो जाओ। ३०५ निरंतर एक मात्र श्रीराम का नाम जपते रहो। यह शारलादास उन्हीं श्रीराम की नित्य शरण में है। ३०६

हनुमान का बिलंका गमन और विषपान से मृत्यु एवं पवन द्वारा पुनः जीवन की प्राप्ति

इसके पश्चात् देवी पार्वती ने उठकर शूलपाणि शिवजी के दोनों चरण पकड़ लिये। १ उन्होंने कहा, हे सुरराज! मुझे मुक्ति प्रदान करो। यह रामायण आप मुझसे समझा कर कहें। २ घोर तपस्या

बदन्ति ईश्वर शुण देवी गोपार्वती ।
घोर तपे मग्न हेले प्रभु रघुपति ।। ४ ।।
एमन्त समये शुण अजोध्या वृत्तान्त ।
काठ आणि जाइ थिले बीर हनुमन्त ।। ५ ।।
घेनिण चन्दन काठ पवनर बळा ।
जानकी चरण तळे ओळगि होइला ।। ६ ।।
कर जोड़ि पचारइ अञ्जनार सुत ।
केवण स्थानरे बिजे देव रघुनाथ ।। ७ ।।
जानकी बोलन्ति शुण आरे हनुमान ।
बिलंकाकु बिजे हेले श्रीरघुनन्दन ।। ८ ।।
लक्षेशिरा पुत्र संगे करिबे समर ।
एका जाइ छन्ति करे धरि धनुशर ।। ९ ।।
शुणि संतापित हेला पवनर सुत ।
बिलंका जिवाकु सज हेला हनुमन्त ।। १० ।।
अजोध्या नगर मध्यु होइला बाहार ।
गगन मार्गरे बिजे हेला हनु वीर ।। ११ ।।
दक्षिण मुरति होइ चळे हनुमान ।
चित्रकूट पर्वतरे मिळिला बहन ।। १२ ।।

प्रारम्भ करके रघुनाथजी बैठ गए। हे प्राणनाथ ! इसके पश्चात् क्या हुआ ? ३ भगवान शंकर बोले, हे देवी पार्वती ! सुनो। रघुपति श्रीरामचन्द्रजी कठिन तपस्या में मग्न हो गये। ४ इस समय अयोध्या का वृत्तान्त सुनो। वीर हनुमान काष्ठ लाने के लिए गये थे। ५ पवनपुत्र चन्दन-काष्ठ लेकर आये और उन्होंने जानकीजी के चरणों में प्रणाम किया। ६ आञ्जनेय ने हाथ जोड़कर पूछा कि प्रभु रघुनाथ कहाँ पर हैं ? ७ जानकी ने कहा, अरे हनुमान ! श्री राघवेन्द्र बिलंका को गये हैं। ८ वह लक्षशिरा के पुत्र के साथ संग्राम करेंगे। वह अकेले हाथ में धनुष-बाण लेकर गये हैं। ९ यह सुनकर पवनपुत्र संतप्त हो गये तथा बिलंका जाने के लिए तैयार हो गये। १० अयोध्यानगरी के बीच से वह बाहर निकल पड़े। महावीर हनुमान आकाश-मार्ग में पहुँच गये। ११ दक्षिणाभिमुख होकर चलते हुए वह शीघ्र ही चित्रकूट पर्वत पर पहुँच गए। १२ वहाँ पर कुछ थोड़ा-सा फल-मूल आहार करके पवन

फळ मूळ किछि तहिं करिण आहार ।
से दिन रहिला सुखे पवन कुमर ॥ १३ ॥
दक्षिण मुरति होइ तहुँ पुणि गला ।
स्वर्णमय लंकापुर सीमारे मिळिला ॥ १४ ॥
नग्र लोकमाने देखि कातर होइले ।
बिभीषण आगे जाइ चार जणाइले ॥ १५ ॥
भो देव शुणिमा हेउ बीर लंकेश्वर ।
हनुमन्त आसि प्रवेशिला लंकापुर ॥ १६ ॥
शुणि बिभीषण मने हेला छन्न-छन्न ।
किनिमन्ते आसि अछि बीर हनुमान ॥ १७ ॥
कि अबा सन्देश देइछन्ति रघुबीर ।
कर जोड़ि पचारिला लंकार ठाकुर ॥ १८ ॥
अजोध्या नगर अबा न पाइले राम ।
कि अबा पथरे करि अछन्ति विश्राम ॥ १९ ॥
एथ नेबाकु कि अबा पेशिछन्ति तोते ।
संक्षेपे कहिळे हनुजिबइँ परते ॥ २० ॥
कहे हनुमन्त शुण आहे विभीषण ।
बिलंका देशकु बिजे करि छन्ति राम ॥ २१ ॥
एका गले श्री रामंक संगे केहि नाहिं ।
से कारणु बिलंकाकु जाउअछि मुहिं ॥ २२ ॥

कुमार उस दिन वहीं पर सुखपूर्वक रह गये । १३ फिर दक्षिण दिशा की ओर चलते हुए वह स्वर्णमयी लंकापुरी की सीमा पर पहुँच गये । १४ नगरवासी उन्हें देखकर भय से कातर हो उठे । विभीषण के आगे जाकर दूत ने सूचना दी । १५ हे देव ! बीर लंकेश्वर ! आप सुनें ! हनुमान आकर लंकापुर में प्रविष्ट हुए हैं । १६ यह सुनकर विभीषण का मन स्तब्ध हो गया । वीर हनुमान किस कारण से वापस आ गये हैं ? १७ रघुवीर ने क्या कोई सन्देश भेजा है ? लंका के अधीश्वर ने हाथ जोड़कर जिज्ञासा प्रकट की । १८ क्या अयोध्या राम को नहीं मिल पाई ? अथवा वह मार्ग में ही विश्राम कर रहे हैं । १९ अथवा मुझे लाने के लिए तुम्हें यहाँ भेजा है । संक्षेप में हनुमान जी ने सारा समाचार बताकर अपने आगे जाने की बात कही । २० हनुमान ने कहा, हे विभीषण ! सुनो । श्रीराम बिलंका देश को गये हैं । २१ अकेले गए हुए श्रीराम के साथ में कोई नहीं है । इसी कारण से मैं बिलंका को जा रहा हूँ । २२ यह

एहा सुणि बिभीषण बिकल होइला ।
एका की किम्पाइँ गले कौशल्यांक बळा ।। २३ ।।
दण्ड बळ घेनि कि मुं जिबि हनुमान ।
राजा संग जुझिबेकि से रघुनन्दन ।। २४ ।।
शुणि हनुमान बोले श्रीराम बोइले ।
बारता पाइले सैन्य घेनि जिब भले ।। २५ ।।
आगे मुहिं जाइ करे श्री रामंकु ठाब ।
बेगे जाउअछि राजा बिलम्ब होइब ।। २६ ।।
एहा शुणि बिभीषण भितरे पशिला ।
स्वादु पक्वफळ आणि खाइबाकु देला ।। २७ ।।
भुंजिण संतोष होइ पवन नन्दन ।
लंकारु बाहार हेला बीर हनुमान ।। २८ ।।
दक्षिण मुरति होइ तहुँ चळि गला ।
लंकापुर मध्यु बीर बाहार होइला ।। २९ ।।
गगन मार्गरे जाए वीर हनुमान ।
बाटरे सहाय तांकु होइले पवन ।। ३० ।।
प्रचण्ड पर्वत परे मिळिला बहन ।
बिलंकाकु दृष्टि देला पवननन्दन ।। ३१ ।।
देखिला जगती मेढ़ मण्डप आस्थान ।
लंकापुर ठारु से सुन्दर दुइगुण ।। ३२ ।।

सुनकर विभीषण व्याकुल हो गया । कौशल्यानन्दन अकेले ही क्यों गये ? २३ हे हनुमान ! क्या मैं अस्त्र-शस्त्र सेना लेकर चलूं ? क्या राजा के साथ में रघुनन्दन संग्राम करेंगे ? २४ यह सुनकर हनुमान जी बोले कि श्रीराम के कहने पर समाचार पाकर भले ही तुम सेना लेकर आ जाना । २५ आगे मैं जाकर श्रीराम का पता लगाऊँ । हे राजन् ! मैं शीघ्रता में जा रहा हूँ । हमें बिलम्ब हो जाएगा । २६ यह सुनकर विभीषण भीतर घुस गये तथा स्वादिष्ट पके हुए फल लाकर उन्हें खाने को दिये । २७ पवनपुत्र जिन्हें खाकर सन्तुष्ट हुए तथा महावीर हनुमान लंका से बाहर निकल पड़े । २८ वहाँ से दक्षिण की ओर अभिमुख होकर चलते हुए महावीर जी लंकापुरी के बीच से बाहर निकल गये । २९ वीर हनुमानजी आकाशमार्ग से जा रहे थे । मार्ग में पवनदेव उनके सहायक बने । ३० प्रचण्ड पर्वत पर शीघ्र ही पहुँचकर पवन-नन्दन ने बिलंका की ओर दृष्टि डाली । ३१ उन्होंने महल, विमानमण्डप

महाबळी अति दीर्घ दिशन्ति असुर ।
भूमि परे पाद थाए आकाशरे शिर ।। ३३ ।।
अतिअन्त भयंकर असुरे दिशन्ति ।
राजाकु अमात्य माने दर्शन करन्ति ।। ३४ ।।
देखि हनुमन्त मुखु न स्फुरे बचन ।
काहिं बिजे करिछन्ति कमळलोचन ।। ३५ ।।
केमन्ते ताहांकु आजि करिबिमुं ठाव ।
मेरुगिरि तुल्य दिशु अछन्ति दानव ।। ३६ ।।
एते बोलि हनुमन्त बसि बिचारइँ ।
रात्र हेले बिलंकारे पशिबइँ मुहिं ।। ३७ ।।
फळ मुळ भूञ्जिण रहिला हनुमान ।
राम राम बोलि करे मने सुमरण ।। ३८ ।।
दिवस जाइण रात्रि प्रवेश होइला ।
नगर भितरे पशि रामंकु खोजिला ।। ३९ ।।
घरे घरे न छाड़इ खोजे हनुमान ।
काहिं बा मर्कट रूप काहिं हुए श्वान ।। ४० ।।
काहिं बा मार्जार काहिं मुषारूप होइ ।
काहिं बा भ्रमर रूपे भितरे पशइ ।। ४१ ।।

तथा सिंहासन देखे जिनकी शोभा लंकापुर से भी दुगनी थी । ३२ महाबली असुर अत्यंत दीर्घकाय दिख रहे थे । उनके पैर भूमि पर तथा सिर आकाश में थे । ३३ असुर अत्यंत भयंकर दिखाई देते थे तथा मंत्रीगण राजा के दर्शन कर रहे थे । ३४ यह देखकर हनुमान के मुख से वाक्य नहीं निकल रहे थे । कमल के समान नेत्र वाले श्रीराम कहाँ हैं ? ३५ आज उनका पता मैं किस प्रकार लगाऊँगा ? दानव मेरु पर्वत के समान दिखाई पड़ रहे थे । ३६ ऐसा कह कर हनुमान जी बैठकर विचार करने लगे कि रात होने पर मैं बिलंका में प्रवेश करूँगा । ३७ हनुमान मूल-फल खाकर रह गये और मन में राम ! राम ! का स्मरण करने लगे । ३८ दिन व्यतीत होने पर रात्रि का प्रवेश हुआ । नगर के भीतर घुसकर उन्होंने राम की खोज की । ३९ हनुमान कोई भी घर नहीं छोड़ रहे थे अर्थात् घर-घर में कहीं वानर और कहीं श्वान बनकर ढूँढ़ रहे थे । ४० कहीं बिल्ली, कहीं चूहा तथा कहीं भ्रमर का रूप धारण कर भीतर घुस जाते थे । ४१ पवनकुमार श्रीराम को सभी महलों में, बाजार-गली-कूचें-मार्ग तथा

सबु पुरे पशि खोजे पबन कुमर ।
हाट बाट दाण्डे खोजे पशि घर-घर ॥ ४२ ॥
कन्दि जे बिकन्दि हनु बुलिण खोजइ ।
श्री रामंकु न पाइण मनरे भाळइ ॥ ४३ ॥
रात्रि अर्धे हनुमान पशिला भितरे ।
मंत्रीर नबरे पशि खोजे हनुवीर ॥ ४४ ॥
त्रिशिरा पुररे पशि रामंकु खोजइ ।
तहुँ जाइ नृपतिर मंदिरे मिळइ ॥ ४५ ॥
देखिला पळंके शोइअछि से असुर ।
द्विसहस्र नेत्र तार द्विसहस्र कर ॥ ४६ ॥
लक्षे बिळासिनी बसि चामर ढाळन्ति ।
लक्षे परिबारी दैत्य पाद मंचाळन्ति ॥ ४७ ॥
ताम्बुळ जोगान्ति आणि लक्षे परिबारी ।
सप्तशिरा मंत्री अछि सन्निधे ताहारि ॥ ४८ ॥
श्री रामंक कथा राजा बिचारे मनरे ।
मंत्री कि चाहिण राजा एमन्त पचारे ॥ ४९ ॥
कह मंत्री राम अटे काहार कुमर ।
केवण देशरे अबा अटे तार घर ॥ ५० ॥
से मोर कटकरे किम्पाइँ पशिला ।
एका दिने आसिथिला पुणि न आसिला ॥ ५१ ॥

घर-घर में घुसकर खोज रहे थे । ४२ हनुमान गली-कूचों में भी घूम-घूमकर खोज रहे थे तथा श्रीराम को न पाकर मन में सोच करने लगते । ४३ अर्ध निशा में वह भीतर जाकर मंत्री के महल में घुसकर खोजने लगे । ४४ त्रिशिरा के महल में घुसकर वह राम को खोजने लगे । फिर वहाँ से वह राजा के महल में जा पहुँचे । ४५ उन्होंने उस असुर को लेटे देखा । उसके दो हजार नेत्र तथा दो हजार भुजाएँ थीं । ४६ एक लाख विलासिनी बालाएँ चँवर डुला रही थीं । एक लाख परिजन दैत्य पैर दबा रहे थे । ४७ एक लाख परिजन पान लाकर दे रहे थे । मंत्री सप्तशिरा भी उसके निकट ही उपस्थित था । ४८ राजा श्रीराम के विषय में मन में विचार कर रहा था । उसने मंत्री की ओर देखकर इस प्रकार पूछा । ४९ हे मंत्री ! कहो राम किसका पुत्र है तथा किस देश में उसका घर है ? ५० वह मेरे दुर्ग में कैसे घुसा ? एक ही दिन

पूर्वे मुं डगर मुखे बार्ता जाणिथिलि ।
लंकागढ़ ध्वंसिलार कथा पाइथिलि ॥ ५२ ॥
राम भारिजाकु हरि आणिला रावण ।
तेणु करि लंका ध्वंस कला रघुराण ॥ ५३ ॥
कुम्भकर्ण इन्द्रजित रावणकु मारि ।
बन्दीरु ताहार भारिजाकु नेला तारि ॥ ५४ ॥
रावण कनिष्ठ भाइ नाम विभीषण ।
से जाइ रामंक पादे पशिला शरण ॥ ५५ ॥
ताहाकु लंकारे राम राजा कराइले ।
भारिजाकु संगे घेनि अजोध्याकु गले ॥ ५६ ॥
एवे मो कटके सेही पशिला किम्पाइँ ।
मुहि त ताहार किछि दोष करि नाहिं ॥ ५७ ॥
एहा शुणि मंत्री बोले शुण दण्डधारी ।
स्वयं विष्णु राम नर रूपे अवतरि ॥ ५८ ॥
महिरे बहुत जश अर्जिलाणि सेहि ।
दशरथ सुत सेहि अजोध्यार साइँ ॥ ५९ ॥
कौशल्या राणींक गर्भे जनम लभिला ।
वीर परशुराम दर्प हेलेण गंजिला ॥ ६० ॥

वह आया था फिर नहीं आया । ५१ पूर्व काल में दूत के मुख से मुझे जानकारी मिली थी । लंकागढ़ के नष्ट होने का समाचार भी मुझे मिला था । ५२ राम की पत्नी को रावण हरण करके ले गया था । इसी कारण से रघुनाथ ने लंका विध्वंस कर डाली थी । ५३ उसने कुंभकर्ण, इन्द्रजित् तथा रावण का वध करके अपनी वन्दिनी भार्या को मुक्त करा लिया । ५४ रावण का छोटा भाई, जिसका नाम विभीषण था, राम की चरण शरण में पहुँच गया । ५५ राम ने उसे लंका का राजा बना दिया और स्वयं अपनी पत्नी को लेकर अयोध्या चला गया । ५६ अब वह ही मेरे दुर्ग में किस कारण से घुस आया ? मैंने तो उसका कोई अपराध भी नहीं किया । ५७ यह सुनकर मंत्री बोला, हे दण्डधारी ! आप सुनें । स्वयं विष्णु ने ही राम-नाम के मानव रूप में अवतार धारण करके पृथ्वी पर बहुत यश अर्जित किया है । वह ही दशरथ का पुत्र तथा अयोध्या का स्वामी है । ५८-५९ कौशल्या रानी के गर्भ से जन्म लेकर उसने वीर परशुराम का घमण्ड खेल-खेल में ही चूर-चूर कर दिया । ६० शंकर के धनुष का खण्डन करके उसने वैदेही से विवाह किया । वालि को

शिव धनु भांगि बिभा हेले बइदेही ।
बाळिकिं मारिण सुग्रीवकु राज्यदेइ ।। ६१ ।।
रावणकु मारि राजा कला विभीषण ।
एबे बिलंकाकु धाड़ी देला रघुराण ।। ६२ ।।
निश्चय से आसि पुणि करिब समर ।
अवश्य ए नग्र उजाड़िब रघुवीर ।। ६३ ।।
एबे मोर बोल कर आहे नृप साइँ ।
रामंकु इतर प्राय न मण गोसाइँ ।। ६४ ।।
मानव विष्णु से मन्थपुरे जन्म होइ ।
असुरंकु मारिबाकु देह अछि बहि ।। ६५ ।।
जहि से असुर देखे करइ बिनाश ।
दुष्ट मारि महीभारा करिब उश्वास ।। ६६ ।।
मोर बोल कर एबे बिलंका राजन ।
श्रीराम अइले पादे पशिबा शरण ।। ६७ ।।
श्री रामंक संगतरे आरम्भिण प्रीति ।
अकंटक राज्य भोग कर लंकापति ।। ६८ ।।
मंत्रीर बचन शुणि हसिला असुर ।
बोइलाक से रामकु किम्पा मोर डर ।। ६९ ।।
मोते पुणिमारिबाकु राम कि भाजन ।
इतर पराये मोते मण मंत्रीराण ।। ७० ।।

मार कर और सुग्रीव को राज्य देकर उसने रावण का वध किया तथा विभीषण को राजा बना दिया। अब उसी रघुनाथ ने बिलंका को लाइन में लगा दिया। ६१-६२ निश्चय ही वह आकर पुनः युद्ध करेगा। रघुवीर इस नगर को अवश्य ही उजाड़ डालेगा। ६३ हे राज-राजेश्वर ! अब मेरी बातों पर ध्यान दें तथा राम को कोई और न समझें। ६४ वह विष्णु मृत्युलोक में मानव-रूप में असुरों का विनाश करने के लिए अवतरित हुआ है। ६५ जहाँ भी वह असुरों को देखता है उसका विनाश कर देता है। दुष्टों को मारकर वह पृथ्वी का भार उतार देगा। ६६ हे बिलंकेश्वर ! अब मेरी बात मानकर श्रीराम के आने पर हम लोग उनकी चरण-शरण ग्रहण कर लें। ६७ श्रीराम के साथ प्रीति करके आप लंका का अकंटक राज्य भोग सकते हैं। ६८ मंत्री के बचन सुनकर असुर हँस पड़ा और बोला कि उस राम से मुझे क्या डर पड़ा है ? ६९ क्या राम मेरा वध

मोते देखि शंका करे स्वर्गे सुनासीर।
देवता मानंकु आणि बांधिण पादर ॥ ७१ ॥
जमनिति बाड़ी ताटि मोहर खटइ।
कुबेर देवता मोर महल काचइ ॥ ७२ ॥
निमिषके बुलइ मूँ चउद ब्रह्माण्ड।
तर्पण करइ निति सिन्धु सात खण्ड ॥ ७३ ॥
स्वर्ग मर्त्य पाताल ए त्रिपुर साधिलि।
अकंटक बिलंकारे सुख भोग कलि ॥ ७४ ॥
मुँकिम्पाइँ रामपाद पशिबि शरण।
एपुरकु अइलेकि बर्तिब श्रीराम ॥ ७५ ॥
एहाशुणि मंत्रीबर होइला मउन।
मने बिचारिला निश्चे मरिब राजन ॥ ७६ ॥
गुपुतरे शुणुथिला वीर हनुमान।
जाणिला एथकु आसि अछन्ति श्रीराम ॥ ७७ ॥
तेणुमंत्री चित्ते होइलाणि बड़ भीति।
एबे त निश्चय बध हेबो लंकपति ॥ ७८ ॥
अवश्य भेटिबि एथे श्री रामंकु मुहिं।
राक्षस पुररु वीर बाहार हुअइ ॥ ७९ ॥

करने के योग्य है ? अरे मंत्रीराज ! मुझे दूसरों के समान मत समझो। ७० मुझे देखकर देवताओं का राजा इन्द्र भी स्वर्ग में शंका करने लगता है। मैंने देवताओं को लाकर पैरों के नीचे बाँध रखा है। ७१ दण्ड लेकर यमराज नित्य मेरा पहरा देता है और कुबेर मेरा महल सफ़ा करता रहता है। ७२ मैं पल मात्र में चौदहों ब्रह्माण्डों में घूम लेता हूँ। सात समुद्रों में नित्य तर्पण करता हूँ। ७३ स्वर्ग, मृत्यु और पाताल लोक मैंने ही सम्हाले हैं तथा बिलंका का अकंटक भोग किया है। ७४ मैं क्यों राम के चरणों की शरण में जाऊँ ? इस नगर में आकर क्या श्रीराम बच पाएगा ? ७५ यह सुनकर मंत्री चुप हो गया और मन में विचार करने लगा कि अब राजा निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त होगा। ७६ महावीर हनुमान गुप्त रूप से सुन रहे थे। उन्होंने अनुमान लगाया कि श्रीराम यहाँ आ चुके हैं। ७७ इसी कारण से मंत्री के मन में बड़ा भय उत्पन्न हो गया है। अब तो लंकेश्वर का वध निश्चित है। ७८ यहाँ पर अवश्य ही मेरी भेंट श्रीराम से होगी। वीर हनुमान राक्षस के महल से बाहर निकल आये। ७९ फिर वह बिलंका नगर में घुसकर उसकी

बिलंका पुररे पशि पुणि हनुमान ।
कळना करइ केते अछइ शइन्य ।। ८० ।।
आठ कोटि चार लक्ष चर अछि तहिं ।
देउळ मण्डप केते तार संख्या नाहिं ।। ८१ ।।
सपत सहस्र बाट पांच सस्र कन्दि ।
पदाति हजार पद्म महा महा जोद्धि ।। ८२ ।।
सात सस्र गजबाजि पंचाश अयुत ।
पांच शत कोटि रथ पद्मेक राउत ।। ८३ ।।
सात क्षोणि बाद्यकार वीर अगणित ।
पयेकार फेरीकार अछन्ति बहुत ।। ८४ ।।
लक्षेक पाइक पांचशत कोटिजेना ।
दशवृन्द मल्ल पुणि असी खर्व सेना ।। ८५ ।।
सात सस्र पाञ्चशत बाउन हजार ।
मधुबन तोटा अटे जोजने ओसार ।। ८६ ।।
समस्त बुलिण बेंगे पवनर बळा ।
श्रीरामंकु खोजि खोजि काहिं न पाइला ।। ८७ ।।
सात दिन खोजिला से पवन कुमर ।
श्रीरामंकु खोजि न पाइला हनुवीर ।। ८८ ।।
ए समये जाहा हेला पार्वती गोशुण ।
संकेत रखिछि बीर बिलंका रावण ।। ८९ ।।

सेना के विषय में टोह लेने लगे । ८० वहाँ पर आठ करोड़ चार लाख दूत थे । देवालय कितने थे जिनकी कोई संख्या नहीं । ८१ सात हज़ार मार्ग तथा पाँच हज़ार गलियाँ थीं । एक हज़ार पद्म महान योद्धाओं की पैदल सेना थी । ८२ सात हज़ार हाथी, पाँच अयुत घोड़े, पाँच सौ करोड़ रथ तथा एक पद्म घुड़सवार थे । ८३ सात अक्षोहिणी बाजे वाले, अगणित वीर योद्धा और बहुत से पयकार व फेरीवाले थे । ८४ एक लाख राजदूत, पाँच सौ करोड़ योद्धा, पहलवानों के दस वृन्द और अस्सी खर्व सेना थी । ८५ सात हज़ार पाँच सौ बावन योजन में मधुबन फैला हुआ था । ८६ पवननन्दन सभी स्थानों में शीघ्रता से घूम आए । परन्तु श्रीराम को वह कहीं भी न खोज पाए । ८७ पवनकुमार को खोजते-खोजते सात दिन व्यतीत हो गए, किन्तु महावीर हनुमान को श्रीराम न मिल पाये । ८८ हे पार्वती ! इसी समय जो कुछ हुआ उसे सुनो । वीर बिलंकाधिपति रावण ने कुछ संकेत रख छोड़े थे । ८९

बिष सरोवर अछि उत्तर दुआरे।
जळ सरोबर अछि दक्षिण पाखरे ॥ ९० ॥
मित्र होइ केहि जणे कटके पशिले।
जळपान करि दरशन करे भले ॥ ९१ ॥
शत्रु होइ जेबे आसि पशे कटकरे।
बिषपान करि मरे से उत्तर द्वारे ॥ ९२ ॥
ग्राम देवतींकि जगाइछि तथ्य पाश।
शत्रु मित्र चिन्हिण से करइ विनाश ॥ ९३ ॥
एमन्त समये जाइ पवनर बळा।
बिलंका उत्तर गढ़ द्वार रे मिळिला ॥ ९४ ॥
काहिं गलेराम बोलि मनरे भाळइ।
काहा ठारु उपदेश पाइबइँ मुहिं ॥ ९५ ॥
ग्राम देवतींकि जाइ भेटिला मारुति।
शत्रु बोलि जाणिकरि से ग्राम देवती ॥ ९६ ॥
ए बानर श्रीरामर अटइ जे दास।
उपाय भिआइ याकु करिबि बिनाश ॥ ९७ ॥
एते बोळि मने भाबि होइले बाहार।
देवती बसिले हनुमन्तर कण्ठर ॥ ९८ ॥

उत्तर द्वार पर विष का सरोवर था और उसके दक्षिण की ओर जलपूर्ण तालाब था। ९० जब कोई भी व्यक्ति मित्रभाव से दुर्ग में प्रविष्ट होता था तो जलपान करके भली प्रकार से दर्शन कर सकता था। ९१ और जब कोई भी शत्रुभाव से उस दुर्ग में घुसता था तो वह उत्तरी द्वार पर विषपान करके मृत्यु को प्राप्त हो जाता था। ९२ उसने उसके निकट ही ग्रामदेवी की नियुक्ति कर रखी थी। वह शत्रु व मित्र पहचानकर उसका विनाश कर दिया करती थी। ९३ इसी समय पवननन्दन बिलंका के उत्तरी द्वार पर जा पहुँचे। ९४ रामचन्द्र जी कहाँ गये, इस प्रकार वह मन में सोचने लगे। किसके द्वारा मुझे उनका पता चलेगा? ९५ इसी समय मारुति की भेंट ग्रामदेवी से हो गई। उसने शत्रु को पहचान कर यह जान लिया कि यह वानर श्रीराम का सेवक है। उपाय करके मुझे इसका विनाश करना चाहिए। ९६-९७ इस प्रकार मन में विचार करके ग्रामदेवी चलकर हनुमन्त लाल के कण्ठ में बैठ गई। ९८ पागल के

वातुळ पराये होइ अंजनार बळा।
जळपान करि जाइ गरळ भक्षिला ॥ ९९ ॥
शरीर बिकळ हेला पाइ बिष ज्वाळा।
चळि न पारिला आउ पवनर बळा ॥ १०० ॥
जाइण शोइला चूत वृक्षर मूळरे।
मिळाइ पडिला देह गरळ ज्वाळारे ॥ १०१ ॥
प्राण बिसर्जिला बीर हनुमन्त तहिं।
अस्थि कुड़ कुड़ हेला मंसगला बहि ॥ १०२ ॥
एथु अनन्तरे प्रिये शुण दिब्य रस।
हनुमन्त मरिवार हेला षड्मास ॥ १०३ ॥
एसन समय देवी पार्वती गो शुण।
कोपभरे तप जहुँ करन्ति श्रीराम ॥ १०४ ॥
ब्रह्मांक आसन कम्प उठे घन-घन।
कम्पमान होइ उठे अमर भुवन ॥ १०५ ॥
ब्रह्मा पचारन्ति सुनासीर मुख चाहिं।
कह मो आसन आज कम्पिला किम्पाइ ॥ १०६ ॥
बृहस्पति बोले तप करन्ति श्रीराम।
मारि न पारिले जहुँ बिलंका राजन ॥ १०७ ॥
तेणु घन घन तुम आसन कम्पिला।
ए अमरावतीपुर कम्पमान हेला ॥ १०८ ॥

समान आंजनेय ने जल पीकर विष भक्षण कर लिया। ९९ विष की ज्वाला के कारण उनका शरीर व्याकुल हो गया। पवनपुत्र और फिर चल नहीं पाये। १०० वह आम्र वृक्ष के नीचे जाकर लेट गये। विष की ज्वाला से उनका शरीर झुलस गया। १०१ वीर हनुमान ने वहीं अपने प्राण त्याग दिये। उनका मांस गल गया और हड्डियाँ चिटक गईं। १०२ हे प्रिये! इसके बाद का दिव्य रस श्रवण करो। हनुमान को शरीर छोड़े छः मास व्यतीत हो गये। १०३ इसी समय हे देवी पार्वती! सुनो। जब कुपित होकर श्रीराम तप में लीन थे, तभी ब्रह्मा का आसन हिलने लगा तथा सम्पूर्ण देवलोक काँप उठा। १०४-१०५ ब्रह्मा ने इन्द्र की ओर ताकते हुए अपने आसन के हिलने का कारण पूछा। १०६ बृहस्पति ने कहा कि जब श्रीराम बिलंकेश्वर का वध न कर सके तो उन्होंने तप करना प्रारम्भ कर दिया। १०७ इसी कारण से तुम्हारा आसन वेग से डोलने लगा तथा यह देवलोक कम्पित होने लगा। १०८ यह सुनकर

एहा शुणि देवगण विचारिले बसि ।
कि उपाये असुर कुमारिबे से आसि ॥ १०९ ॥
पवनकु पचारिले तोर पुत्र काहिं ।
हनु अइलेक सबु कार्ज सिद्ध होइ ॥ ११० ॥
काहिं अछि तो कुमर खोज तु समीर ।
एहा शुणि पवन जे खोजिला सत्वर ॥ १११ ॥
अजोध्या नगर जाक खोजिळा पवन ।
श्रीरामंक ठारे न देखिला हनुमान ॥ ११२ ॥
बिलंकारे घरे घरे पशिण खोजिला ।
न पाइ हनुकु बहु बिस्मय होइला ॥ ११३ ॥
देवंक सभारे जाइ कहिला समीर ।
खोजि खोजि न पाइलि पुत्रकु मोहर ॥ ११४ ॥
कि करिबि केणे गला मोहर नन्दन ।
एते कहि सभा मध्ये कांदिला पवन ॥ ११५ ॥
देखि देवगण वृहस्पतिकु अनाइ ।
पांजिरे देखन्ति हनुमन्त गला काहिं ॥ ११६ ॥
पांजिरे बुझिण जे जाणिले वृहस्पति ।
बिलंकारे बिष खाइ मरिछि मारुति ॥ ११७ ॥

बैठकर देवगण विचार-विमर्श करने लगे कि श्रीराम किस उपाय से आकर असुर का वध करेंगे । १०९ उन्होंने पवनदेव से प्रश्न किया कि तुम्हारा पुत्र कहाँ है ? हनुमान के आने से ही सारा कार्य सिद्ध हो पायेगा । ११० हे पवन ! तुम खोज करो । तुम्हारा बेटा कहाँ है ? यह सुनकर पवनदेव ने शीघ्रता से खोजना प्रारम्भ किया । १११ उसने सारी अयोध्या छान डाली तथा श्रीराम के निकट भी हनुमान नहीं दिखाई पड़े । ११२ उसने बिलंका में घर-घर घुसकर खोजा परन्तु हनुमान को न पाकर बहुत विस्मित हो उठे । ११३ उन्होंने देवसभा में जाकर कहा कि मैं खोज-खोजकर भी अपने पुत्र को नहीं पा सका । ११४ मैं क्या करूँ ? मेरा बेटा कहाँ चला गया ? इस प्रकार कहते हुए सभा में पवनदेव क्रन्दन करने लगे । ११५ यह देखकर देववृन्द ने बृहस्पति की ओर दृष्टि फिराई । वह पत्रा (यंत्री) में देखने लगे कि हनुमान कहाँ गये हैं । ११६ पत्रा में देखकर बृहस्पति जान गए कि हनुमान ने बिलंका में विष खाकर प्राण त्याग दिए हैं । ११७ उन्होंने देवताओं से कहा

देवगणंकु बोइले हनुमन्त मला ।
बिलंका नगरे पशि गरळ खाइला ॥ ११८ ॥
शुणिण पवन उच्चे करइ रोदन ।
निरोधिला जहुँ मले जीव जन्तुगण ॥ ११९ ॥
देवता बोइले कोप करु किस पाइँ ।
देबा आम्भमाने तोर पुत्रकु जीआइँ ॥ १२० ॥
शुणिण पवन आनन्दित हेला मने ।
बिलंकाकु बिजे कले देवगण माने ॥ १२१ ॥
रात्र अर्द्धे प्रबेशिले बिलंका नगरे ।
निशबदे रहिछन्ति समस्त असुरे ॥ १२२ ॥
जेउँ ठारे रहि अछि पवन नन्दन ।
एक रुण्ड होइण मिळिले देवगण ॥ १२३ ॥
अस्थिमान आणि तहिं एकाठाव कले ।
सुनासीर ता उपरे सुधा वृष्टि कले ॥ १२४ ॥
संजीवनी मंत्र गोटि पढ़िलेक जम ।
चेतना पाइण उठि बसे हनुमान ॥ १२५ ॥
नयन मळिण चारि दिगकु से चाहें ।
देवंकु देखिण हनु नमस्कार होए ॥ १२६ ॥

कि हनुमन्त बिलंका नगर में प्रविष्ट होकर विष-भक्षण के कारण मृत हो चुके । ११८ यह सुनते ही पवनदेव उच्च स्वर से रोदन करने लगे । उसके निरुद्ध होने से जीव-जन्तु मरने लगे । ११९ देवताओं ने कहा कि तुम क्यों कुपित हो रहे हो ? हम लोग तुम्हारे पुत्र को जीवित कर देंगे । १२० यह सुनकर पवनदेव मन में आनंदित हो गए तथा देवगण बिलंका की ओर चल दिए । १२१ अर्ध रात्रि के समय वह नगर में प्रविष्ट हुए । उस समय सारे असुरगण निस्तब्ध बैठे थे । १२२ जहाँ पर हनुमान का मृत शरीर पड़ा था वहीं पर देवता एकत्रित हो गये । १२३ उन सबने अस्थियों को एक स्थान पर एकत्रित किया और इन्द्रदेव ने उसी पर अमृत की वर्षा कर दी । १२४ यमराज ने संजीवनी मंत्र की आवृत्ति की । इस पर हनुमान चेतना पाकर उठ बैठे । १२५ उन्होंने आँख मलकर चारों ओर दृष्टिपात किया तथा देवताओं को देखकर उन्हें नमस्कार किया । १२६ वह प्रणाम करके विनयपूर्वक बोले कि आप

ओळगिण बिनयरे बोलइ बचन।
समस्ते त अछ काहिं अछन्ति श्रीराम ॥ १२७ ॥
पवनकु हनु स्नेहे धरिला कोळरे।
राम काहिं छन्ति बोलि मारुति पचारे ॥ १२८ ॥
ब्रह्मा जे बोइले राम एथे आसि थिले।
असुरर ताळी बात घाते उड़ि गले ॥ १२९ ॥
वृद्ध गण्डुकि कूळरे अछन्ति श्रीराम।
दश द्वार रुंद्धि घोर तपस्या रे मग्न ॥ १३० ॥
विलम्ब न करि जाअ पवन तनुज।
जेमन्त हुअइ बाबु कर देवकार्ज ॥ १३१ ॥
एते बोलि आश्वासना कले देवगण।
बोइले तो देह हेउ बज्रहुँ कठिन ॥ १३२ ॥
अग्निरे शस्त्ररे भेद नोहु तो शरीर।
श्रीरामंक भकत तु देवकार्ज कर ॥ १३३ ॥
एते बोलि हनु अंगे लगाइले कर।
बज्रहुँ कठिन हेला हनुर शरीर ॥ १३४ ॥

सब लोग तो उपस्थित हैं, परन्तु श्रीराम कहाँ हैं ? १२७ पवनदेव को बड़े स्नेह से हनुमान ने पकड़कर पूछा कि श्रीराम कहाँ हैं ? १२८ ब्रह्मा ने कहा कि राम यहाँ आए थे। असुर की ताली की हवा के आघात से उड़ गये। १२९ वह बूढ़ी गंडक के तट पर हैं और दश द्वारों का निरोध करके घोर तपस्या में मग्न हैं। १३० हे पवनात्मज ! विलम्ब न करके शीघ्र ही जाओ ! और हे तात ! जैसे बने वैसे देवकार्य सम्पन्न करो। १३१ इतना कहकर देवताओं ने आश्वासन देते हुए आशीर्वाद दिया कि तुम्हारी देह वज्र से भी कठोर हो जाय। १३२ तुम्हारा शरीर, अग्नि तथा शस्त्र से अभेद्य हो जाय। तुम श्रीराम के भक्त हो। देवकार्य सम्पादित करो। १३३ इतना कहकर सबने हनुमान जी का शरीर स्पर्श किया, जिससे वह वज्र से भी कठोर हो गया। १३४

हनुमान श्रीरामंक भेट ओ हनु सहस्रशिरा रावण गर्भे रामंकु स्मरण करिबा

ईश्वर बोइले देवी पार्वती गो शुण ।
स्वर्गपुरे चळिगले सर्व देवगण ।। १ ।।
एथु अनन्तरे पुणि पवनर बळा ।
श्रीराम बारता पाइ हरषित हेला ।। २ ।।
बिलंकारु बाहारिला पवन नन्दन ।
कहुँ कहुँ विक्रमिण व्यापिला गगन ।। ३ ।।
प्रचण्ड पर्वते जाइँ तक्षणे मिळिला ।
उत्तर मुरति होइ हनु चळिगला ।। ४ ।।
रात्रि पाहि गला बेळ हेला एक दण्ड ।
वृद्ध गण्डुकीरे उदे हेले मारतण्ड ।। ५ ।।
श्रीरामंकु हनुमान बुलिण खोजिला ।
पर्वतरे उठि चउदिग अनाइला ।। ६ ।।
बनरे पशिला हनुमन्त बीरबर ।
देखिला करन्ति तप से कोदण्डधर ।। ७ ।।
मन पवनकु रुन्धि अछन्ति श्रीराम ।
अनळ पराय जळे रामंक नयन ।। ८ ।।

हनुमान-श्रीराम-मिलन एवं सहस्रशिरा रावण के गर्भ में हनुमान द्वारा श्रीराम का स्मरण

महादेव जी बोले, हे पार्वती देवी ! सुनो । देवतागण स्वर्गलोक चले गये । १ इसके पश्चात् पवनकुमार श्रीराम की वार्त्ता पाकर प्रसन्न हो गये । २ बातों-बातों में पवननन्दन बिलंका से निकल पड़े तथा कूद कर आकाशमण्डल में पहुँच गये । ३ उसी क्षण प्रचण्ड पर्वत आ जाने पर वह उत्तराभिमुख होकर चल दिए । ४ रात्रि व्यतीत हो गई । एक दण्ड दिन चढ़ आया । बूढ़ी गण्डक में दिनकर उदय हो गये । ५ हनुमान घूम-घूमकर श्रीराम को खोजने लगे । पर्वत पर चढ़कर उन्होंने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई । ६ महावीर हनुमान वन में प्रविष्ट हुए । उन्होंने कोदण्डधारी श्रीराम को तपस्या करते देखा । ७ रामचन्द्र जी ने अपनी प्राणवायु का निरोध कर लिया था । उनके नेत्र अग्नि के समान प्रज्वलित हो रहे थे । ८ वह श्रीराम की कोपभरी मूर्ति को देखकर

भये कम्पमान देखि राम कोप मूर्ति ।
कि बुद्धि करिबि बसि बिचारे मारुति ॥ ९ ॥
मोते निकि महाकोप करन्ति श्रीराम ।
एते भाळि हनुमन्त कलाक प्रणाम ॥ १० ॥
प्रणाम करिण हनु आगरे बसिला ।
कपाळरे कर देइ निजकु निन्दिला ॥ ११ ॥
बिकळ होइण पुणि अनेक कान्दिला ।
कान्दि कान्दि हनुमन्त भुमिरे लोटिला ॥ १२ ॥
हताश होइण हनु दशदिग चाहें ।
क्षणे कान्दे क्षणे उठे भूमि परे शुए ॥ १३ ॥
पुणि हनु श्रीरामंकु सन्निधिकु जाइ ।
कर जोड़ि पादपद्म तळरे पड़इ ॥ १४ ॥
अनेक बिकळ जहुँ हेला हनु बीर ।
तप भाँगि अनाइले से कोदण्डधर ॥ १५ ॥
पुण पुण हनुमान पादरे पड़इ ।
एड़े निराधार तप किम्पाइँ गोसाइँ ॥ १६ ॥
परम पुरुष प्रभु तू काहाकु डरु ।
ए घार दइत्य पाइँ एते तप करु ॥ १७ ॥

भय से काँप उठे। अब क्या उपाय किया जाय, बैठकर यही विचार करने लगे। ९ श्रीराम कहीं हम पर क्रुद्ध न हो जायँ, यह सोचकर उन्होंने (भय से) प्रणाम किया। १० प्रणाम करके हनुमान जी आगे जा बैठे। वह अपना शिर पकड़कर अपनी ही निन्दा करने लगे। ११ फिर व्याकुल होकर अनेक प्रकार से क्रन्दन करने लगे तथा रोते-रोते पृथ्वी पर लोट गये। १२ हताश होकर हनुमन्त लाल दश दिशाओं को ताकने लगे। वह कभी रोते, कभी उठते और फिर भूमि पर गिर पड़ते थे। १३ वह फिर श्री रामचन्द्र जी के निकट जाकर हाथ जोड़कर उनके चरण-कमलों में गिर पड़े। १४ जब हनुमान जी अत्यंत व्याकुल हो गए तभी कोदण्डधारी श्रीराम ने तप भंग करके उनकी ओर ताका। १५ महावीर जी बारम्बार प्रभु राम के चरणों में गिर पड़ते थे। वह कहने लगे, हे स्वामी ! इतना निराधार (कठोर) तप आप किस कारण से कर रहे हैं ? १६ हे प्रभु ! आप परात्पर पुरुष हैं। आप किससे डर रहे हैं ? इस तुच्छ दैत्य के लिए इतना तप कर रहे हैं। १७ श्रीराम बोले,

श्रीराम बोइले आरे शुण हनुमान ।
एका दइत्यके मुहि पाइलि कवण ।। १८ ।।
कर ताळी बात घाते उड़िलि शुन्यरे ।
आरे हनु पड़िलिमुं आसि एते दूरे ।। १९ ।।
कह बाबू कि उपाये असुर मरिब ।
महा बळियार सेहि दुर्दान्त दानव ।। २० ।।
हनुमन्त बोले पुण शुण रघुराज ।
मुहि जे बूझिलि आजि दैत्य बळबीर्ज ।। २१ ।।
मंत्री घेनी भालुथिला से दैत्य राजन ।
गुपुवरे रहि सबु कलि मुं श्रवण ।। २२ ।।
मंत्रीकि पुछिला सेहि बिलंका राजन ।
श्रीराम अटन्ति कह काहार नन्दन ।। २३ ।।
मंत्री तार बोइलाजे अजोध्या देशर ।
सुर्जबंशे जात दश रथंक कुमर ।। २४ ।।
रावण माइला सेहि लंकानाश कला ।
एबे आसि ए बिलंकापुरे धाड़ि देला ।। २५ ।।
आइले श्रीराम पादे पशिबा शरण ।
राम दया कले सिना होइबा राजन ।। २६ ।।
मंत्री मुखुँ शुणि कोप कला से असुर ।
बोइला रामकु किम्पा मोर एते डर ।। २७ ।।

अरे भाई हनुमान ! सुनो । अकेले इस दैत्य से ही मुझे महान कष्ट मिला है । १८ अरे हनुमान ! उसकी ताली की हवा के आघात से मैं आकाश में उड़कर इतनी दूर आ गिरा । १९ तुम्हीं बताओ, वह असुर किस उपाय से मरेगा ? वह दुर्दान्त दानव बहुत ही बलवान है । २० हनुमान जी बोले, हे रघुनाथ जी ! सुनिए । आज मैं दैत्य का बलवार समझ गया । २१ वह दैत्यराज मंत्री के साथ विचार-विमर्श कर रहा था । मैंने छिपकर सब कुछ सुन लिया । २२ उस बिलंकेश्वर ने मंत्री से पूछा था कि बताओ श्रीराम किसका पुत्र है ? २३ मंत्री ने कहा था कि राम अयोध्या देश के सूर्यवंशी राजा दशरथ का पुत्र है । २४ उसी ने रावण का वध किया है । लंका को नष्ट कर डाला और अब उसी ने बिलंका नगर में लाइन लगा दी । २५ श्रीराम के आने पर उनकी चरण-शरण ग्रहण कर लेंगे । उनकी कृपा पर ही हमारा निस्तार हो सकता है । २६ मंत्री के मुख से यह सुनकर असुर कुपित होकर

मोते मारिबाकु कि रे अटे से भाजन ।
तिनिपुरे मुहिं महाप्रतापी राजन ।। २८ ।।
देवता मानंकु मुहिं पादरे बाँधइ ।
जम मोर बाड़ि ताटि सर्वदा खटइ ।। २९ ।।
कुबेर देवता मोर काचइ महळ ।
निमिष के बुलइ मुँ ब्रह्माण्ड सकळ ।। ३० ।।
जेबे मुहिं श्रीरामरे पशिबि शरण ।
किम्पाइँ डरिबे आउ मोते देवगण ।। ३१ ।।
एमन्त बिचार देव शुणि बिलंकारे ।
सात दिन खोजिलि मुँ तोते सेहि पुरे ।। ३२ ।।
लंकानगर जाक मुँ सकळ बुलिलि ।
जळ मने करि मुहिं गरळ भक्षिलि ।। ३३ ।।
गरळ भक्षण हेलि मांस चर्म हीन ।
गदा होइथिला अस्थि एकाठाबे पुण ।। ३४ ।।
देवगण आसि मोते देलेक जिआइँ ।
तुम्भर बारता देव ब्रह्मा देले कहि ।। ३५ ।।
आबर बोइले तहिं देव कार्ज कर ।
जेमन्ते श्रीराम आसि मारन्तु असुर ।। ३६ ।।

बोला कि राम से क्या मुझे इतना डर है ? २७ क्यों रे ! क्या वह मुझे मारने का पात्र है ? मैं तीनों लोकों में एक महान यशस्वी राजा हूँ । २८ देवताओं को मैंने चरणों में बाँध रखा है । यमराज दण्ड लेकर सदा मेरी चौकीदारी करता है । २९ कुबेर देवता मेरा महल स्वच्छ करता है तथा पल मात्र में सम्पूर्ण ब्रह्मांड में घूम-फिर सकता हूँ । ३० यदि मैं श्रीराम की चरण-शरण में चला जाऊँगा तो फिर देवता मुझसे कैसे डरेंगे ? ३१ हे देव ! इस प्रकार के विचार सुनते हुए मैं बिलंकापुर के उसी भवन में आपको सात दिनों तक खोजता रहा । ३२ मैंने सम्पूर्ण लंका नगर छान डाला । जल के धोखे मैं विष पी गया । ३३ विषपान के कारण मैं मांस तथा चमड़े से रहित हो गया । एक स्थान पर हड्डियों का ढेर लग गया था । ३४ देवताओं ने आकर मुझे जीवित कर दिया । हे देव ! ब्रह्माजी ने आपके समाचार दिये । ३५ उन्होंने वहीं हमसे कहा कि तुम देवताओं का काम करो जिससे श्रीराम आकर असुर का विनाश करें । ३६ देवताओं के मुख से सुनकर मैं दौड़कर

देवंक मुखर शुणि अइलि मुँ धाइँ।
भेट हेला आउ मने भाळ काहि पाइँ ॥ ३७ ॥
चाल बिलंकाकु जिबा बेगे हुअ सज।
मारिबा असुर बंश हेबा देवकार्ज ॥ ३८ ॥
शुणिण श्रीराम मने होइले हरण।
हनुकु पुच्छन्ति पुणि प्रभु रघुशिष्य ॥ ३९ ॥
तोमनकु आसइ कि कह हनु बीर।
मारिकि पारिब मुहि बिलंका असुर ॥ ४० ॥
हनुमान बोले देव भालुछ किम्पाइँ।
मंत्री तार अधइर्ज हेलाणि गोसाइँ ॥ ४१ ॥
नरपति अधइर्ज नोहिले कि हेब।
मरण निकट ताकु हेलाणि राघव ॥ ४२ ॥
राजाठारु मंत्री जाण अटे बलीयार।
सेहि डरिलाणि निश्चे मरिब असुर ॥ ४३ ॥
ए समये अनुकूळ करिबा श्रीराम।
मोहर पीठिरे देव कर आरोहण ॥ ४४ ॥
एहा शुणि ततक्षणे उठि चापधारी।
से गण्डुकी नदी जळे बेगे स्नान सारि ॥ ४५ ॥

आ गया हूँ। भेंट भी हो गई। अब आप और कुछ किसलिए सोच रहे हैं। ३७ चलिए बिलंका चलने के लिए शीघ्र ही तैयार हो जायें। असुर-वंश के वध कर देने से देवताओं का कार्य सिद्ध हो जायगा। ३८ यह सुनकर श्रीराम के मन में अत्यंत हर्ष हुआ। फिर राघवेन्द्र राम हनुमान से पूछने लगे। ३९ हे वीर हनुमान! क्या तुम्हारा मन कहता है कि मैं बिलका के असुर का संहार कर सकूँगा? ४० हनुमान जी बोले, हे देव! आप ऐसा क्यों सोच रहे हैं? उसका मंत्री तो (पहले ही) अपना धैर्य खो चुका है। ४१ असुरराज के अधैर्य न होने से भी क्या होगा? हे राघव! उसकी मृत्यु निकट आ गई है। ४२ राजा से भी उसका मंत्री बहुत बलवान है, ऐसा आप समझ लें। जब वह ही डर गया तब तो असुर निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त होगा। ४३ हे श्रीराम! इसी अनुकूल समय में हम चलें। हे देव! आप मेरी पीठ पर सवार हो जायें। ४४ यह सुनकर उसी क्षण धनुर्धारी श्रीराम उठ खड़े हुए। उन्होंने शीघ्रता से गण्डकी नदी के जल में स्नान किया। ४५ तर्पण करके श्रीराम नदी

तरपण सारि राम कूळरे मिळिले ।
देव पूजा सारि फळ मूळ जे भुंजिले ।। ४६ ।।
सन्ध्या आसि परवेश होइला से दिन ।
शोइले पर्वत परे श्री रघुनन्दन ।। ४७ ।।
मारुति शोइला श्रीरामंक पाद तळ ।
अजोध्यार कथा पचारन्ति रघुबीर ।। ४८ ।।
मातार कुशळ पुनि जानकी बारता ।
भरत वृत्तान्त आउ अजोध्यार कथा ।। ४९ ।।
समस्त बुझाइ कहे वीर हनुमान ।
शुणु शुणु शोइले श्रीकोदण्ड धारण ।। ५० ।।
उजागर होइ जगि बसे हनुमान ।
रात्र पाहिगला शंख शुभे घन-घन ।। ५१ ।।
उठि वेगे स्नानकले कोदण्ड धारण ।
पूजा सारिफळ मूळ करन्ति भक्षण ।। ५२ ।।
अनुकूळ बेळ जानि जानकी रमण ।
हनुमन्त पिठिरे से कले आरोहण ।। ५३ ।।
दक्षिण मूरति होइ चळे हनुमन्त ।
आनन्दरे देवताए स्वर्गे कले नृत्य ।। ५४ ।।
प्रचण्ड पर्वते मिळिलेक रघुपति ।
शंकर कहन्ति शुण देवी गो पार्वती ।। ५५ ।।

के किनारे आ गये तथा देव-पूजा समाप्त करके उन्होंने फल-मूल ग्रहण किये । ४६ उस दिन सायंकाल हो जाने से रघुनन्दन श्रीराम पर्वत पर लेट गये । ४७ हनुमान जी श्रीराम के चरणतल में पड़ रहे । श्रीराम उनसे अयोध्या के विषय में चर्चा करने लगे । ४८ माताओं की कुशल, जानकी जी के समाचार भरत के हालचाल तथा अयोध्या की बातें वीर हनुमान जी सभी कुछ समझाकर कह रहे थे । कोदण्डधारी राम यह सब सुनते-सुनते सो गये । ४९-५० सचेत होकर हनुमान जी पहरे पर बैठ गये । रात्रि समाप्त हो गई । घनघोर शंखध्वनि सुनाई पड़ने लगी । ५१ कोदण्डधारी राम ने उठकर स्नान किया और पूजन समाप्त करके फल-मूलादि भक्षण किये । ५२ अनुकूल समय जानकर जानकीरमण श्रीराम हनुमान की पीठ पर चढ़ गये । ५३ हनुमान जी दक्षिणाभिमुख होकर चल दिए । देवता आनन्द से स्वर्ग में नृत्य करने लगे । ५४ रघुनाथ जी प्रचण्ड पर्वत पर जा पहुँचे । शंकर जी बोले,

अपूर्व रहस्य ए बिलंका रामायण ।
असम्भव वृत्तान्त जे करइ रावण ।। ५६ ।।
काहा ठारु बर पाइ अटे बळीयार ।
बरषक पुर्ण हेले करइ आहार ।। ५७ ।।
माहेन्द्र बेळारे जाइ आस्थाने बसइ ।
दुइ सहस्रभुजकु दिअइ बढ़ाइ ।। ५८ ।।
पर्वत कन्दरे बने जेते जीबगण ।
गो ब्राह्मण पशु पक्षी न करे बारण ।। ५९ ।।
हस्ते जाहा पड़े ताहा आणि गर्भ भरे ।
ताहार भोजन पाळि पड़े से दिनरे ।। ६० ।।
बिलंका नगर मध्ये पड़इ चहळ ।
के बोलइ पला-पला के हुए बिकळ ।। ६१ ।।
बन्धु कुटुम्बमानंकु घेनिण पळान्ति ।
झाड़ बाड़ पर्वतरे जाइण लुचन्ति ।। ६२ ।।
केते जाइँ परबत क्रोटरे लुचिले ।
केते पळाइ न पारि शरण पशिले ।। ६३ ।।
प्रचण्ड पर्वते थाइ प्रभू रघुपति ।
देखिले से नग्रलोके पळाइ आसन्ति ।। ६४ ।।

हे देवी पार्वती ! सुनो । यह बिलंका रामायण अपूर्व रहस्यों से युक्त है । इसमें रावण की अद्भुत कथाओं का समावेश है । ५५-५६ किससे-किससे वर पाकर वह बलवान हो गया था । वर्ष पूर्ण हो जाने पर वह भोजन करता था । ५७ माहेन्द्र नाम की वेला में वह सिंहासन पर बैठ जाता था और दो हजार भुजाओं को प्रसारित कर देता था । ५८ पर्वतों, कन्दराओं तथा वन में रहनेवाले जीव-जन्तु, गऊ, ब्राह्मण, पशु-पक्षी किसी को भी वह न छोड़ता और उसके हाथों में जो भी पड़ जाता उसे वह पकड़कर उदरस्थ कर लेता था । उसके भोजन करने की पाली उसी दिन पड़ती थी । ५९-६० बिलंका नगर में कोलाहल मच जाता था । कोई व्याकुल हो जाता था, कोई भागो-भागो कहने लगता था । ६१ अपने बन्धु-बान्धवों-सहित लोग भागकर झाड़-झंखाड़ों में, पर्वतों में जाकर छिप जाते थे । ६२ कितने ही जाकर पर्वत की गुफाओं में छिप गये । कितने ही न भाग सकने के कारण उसकी शरण में आ गये । ६३ प्रचण्ड पर्वत से ही राघवेन्द्र राम ने नगर के लोगों को भागकर आते हुए देखा । ६४ रघुवंशी वीर राम ने हनुमान से

हनुकु बोलन्ति प्रभू रघुकुळ वीर।
किम्पाइँ पलाइछन्ति ताहांकु पचार॥ ६५ ॥
हनुमन्त पचारइ नग्र लोके चाहिं।
तुम्भेमाने पलाउछ कुह काहिं पाइँ॥ ६६ ॥
असुर बोलन्ति आजि विपत्तिर दिन।
राजांक भोजन पाळि पड़ि अछि पुण॥ ६७ ॥
तेणु बाबु ए नगरे पाएड़ा पड़इ।
एहा शुणि पचारन्ति रघुकुळ साइँ॥ ६८ ॥
केमन्ते भोजन करे तुम्भ नृपराण।
असुरे बोइले तुम्भे सावधाने शुण॥ ६९ ॥
माहेन्द्र जोगरे राजा आस्थाने बसइ।
दुइ सहस्र भुजकु दिअइ बढ़ाइ॥ ७० ॥
जे पड़इ हस्ते ताहा पुराइ गर्भरे।
तेणु पाएड़ा पड़िछि आजि ए नगरे॥ ७१ ॥
एते बोलि सर्वे तहिं गलेक पळाइ।
चमत्कार हेले शुणि रघुकुळ साइँ॥ ७२ ॥
हनुकु चाहिण पुण बोलन्ति श्रीराम।
एथिर विचार बाबु कह हनुमान॥ ७३ ॥

कहा कि तुम इनसे पूछो कि यह लोग किसलिए भाग रहे हैं? ६५ नगरवासियों की ओर देखकर हनुमन्त लाल ने पूछा कि आप लोग किस कारण से भाग रहे हैं? ६६ असुर लोग कहने लगे कि आज विपत्ति का दिन है। उस पर भी आज राजा के भोजन करने की पाली पड़ गई है। ६७ इसी कारण से भाई! इस नगर में भगदड़ मची है। यह सुनकर रघुकुल के स्वामी श्रीराम ने पूछा। ६८ तुम्हारे महाराज किस प्रकार से भोजन करते हैं? असुर लोगों ने कहा कि आप सावधान होकर सुनें। ६९ माहेन्द्र नामक योग में राजा सिंहासन पर आसीन हो जाते हैं और अपनी दो हज़ार भुजाओं को प्रसारित कर लेते हैं। ७० जो हाथ में पड़ जाता है उसे अपने पेट में भर लेते हैं। इसी कारण से आज इस नगर में भागदौड़ मची है। ७१ इतना कहकर सभी वहाँ से भाग गये। रघुनाथ जी यह सुनकर आश्चर्यचकित हो गए। ७२ हनुमान की ओर दृष्टिपात करके श्रीराम पुनः बोले, हे पवनात्मज! अब तुम्हीं विचार कर कहो। ७३ आज हम लोग राक्षस के नगर में नहीं चलेंगे।

आजि आम्भे राक्षसर पुरकु न जिबा ।
एहि परबतरे आज दिनक रहिबा ॥ ७४ ॥
आजि गले बाबुरे आम्भकु जश नाहिं ।
पड़िले असुर हस्ते प्रमाद घटइ ॥ ७५ ॥
पुण पुण हनुमन्त जोड़ि बेनि कर ।
बोलइ भो देव सावधाने हेतुकर ॥ ७६ ॥
पर्वतरे तुम्भे रहिथिब हे गोसाइँ ।
बिलंकापुरकु आजि जाउ अछि मुहिं ॥ ७७ ॥
गगन मार्गरे देव मुहिं उड़ि जिबि ।
पाटि विस्तारिले तार गर्भरे पशिबि ॥ ७८ ॥
अन्तनाड़ि छिण्डाइबि गर्भ मध्ये पशि ।
मरिब दइत निश्चे मुँ भेटिबि आसि ॥ ७९ ॥
श्रीराम बोइले सेहि बळिष्ठ असुर ।
प्राण कि पाइबु हनु पड़िले हस्तर ॥ ८० ॥
गर्भरे पड़िले हनु आसि न पारिबु ।
अकारणे किम्पा बाबु प्राण हराइबु ॥ ८१ ॥
पर लागि किम्पा मरि बुरे हनुबीर ।
आस आज रहिबा ए पर्वत उपर ॥ ८२ ॥
एहा शुणि हनुबीर बोले जोड़ि पाणि ।
पर बोलि किम्पा मोते कुह रघुमणि ॥ ८३ ॥

आज के दिन इसी पर्वत पर रह जाएँगे । ७४ हे भाई ! आज जाने से हमें यश की प्राप्ति नहीं होगी । असुर के हाथों में पड़ जाने से प्रमाद ही घटित होगा । ७५ हनुमान जी बारम्बार दोनों हाथ जोड़कर बोले, हे देव ! सावधानी से विचार करें । ७६ हे स्वामी ! आप पर्वत पर रहिएगा । मैं आज बिलंकापुरी जा रहा हूँ । ७७ मैं आकाशमार्ग से उड़कर जाऊँगा । जब वह अपना मुख खोलेगा तब मैं उसके पेट में प्रवेश करूँगा । ७८ गर्भ में प्रविष्ट होकर मैं उसकी अतड़ियों को तोड़ डालूँगा । निश्चय ही दैत्य मृत्यु को प्राप्त होगा और मैं आकर आपसे भेंट करूँगा । ७९ श्रीराम ने कहा कि वह असुर बड़ा बलवान है। उसके हाथ पड़ने पर क्या तुम प्राण बचा सकोगे ? ८० पेट में जाने से हनुमान तुम वापस न आ सकोगे । हे तात ! अकारण ही क्यों अपने प्राण खोओगे ? ८१ अरे वीर हनुमान ! दूसरे के लिए तुम क्यों प्राण दोगे । आओ आज इसी पर्वत पर रहेंगे । ८२ यह सुनकर हनुमान जी

मुहिंत तुम्भर दास अटे परिचार ।
आज किम्पा पर मोते बोल रघुवीर ॥ ८४ ॥
एबे मोते आज्ञा दिअ बीर मारतण्ड ।
मोड़ि पकाइबि दैत्य सहस्रेक मुण्ड ॥ ८५ ॥
बिलंकापुरकु देव उपाड़ि आणिबि ।
सपत समुद्र जळ पिइ सुखाइबि ॥ ८६ ॥
पर बोलिकरि मोते बोइले किम्पाइँ ।
थाअ तुम्भे पर्वतरे जाउ अछि मुहिं ॥ ८७ ॥
एते बोलि हनुमान तहुँ चळि गला ।
एक गोटि गुम्फा सेहि पर्वतरे देखिला ॥ ८८ ॥
तहिंर भितरे हनु रामंकु रखाइ ।
पर्वत उपाड़ि आणि गुम्फा द्वारे देइ ॥ ८९ ॥
श्रीराम बोइले जेबे बिलंकाकु जिबु ।
विचारिण हनुमन्त कार्ज करुथिबु ॥ ९० ॥
हेउ बोलि हनुमन्त पादरे पड़िला ।
जाउअछि देव बोलि कर से जोड़िला ॥ ९१ ॥
श्रीराम बोइले बाबु तोर शुभ हेउ ।
तोहर बुद्धिरे ए बिलंका नाश जाउ ॥ ९२ ॥

हाथ जोड़कर बोले, हे राघव ! आज किसलिए आप मुझे पराया कह रहे हैं ? ८३ मैं तो आपका सेवाकारी दास हूँ। हे रघुबीर ! आज आपने मुझे पराया कैसे कह दिया ? ८४ हे वीरों में सूर्य के समान प्रभु ! अब आप मुझे आज्ञा दें। मैं दैत्य के हजार शिर मरोड़कर फेंक दूँ। ८५ हे देव ! मैं बिलंका नगर को उखाड़ लाऊँ तथा सात समुद्रों का जल पीकर उन्हें सुखा दूँ। ८६ आपने मुझे पराया किस कारण से कह दिया ? आप पर्वत पर रुकें, मैं जा रहा हूँ। ८७ इतना कहकर हनुमान वहाँ से चल दिए। उन्होंने उसी पर्वत में एक विशेष गुफा देखी। ८८ उसी के भीतर श्रीराम को रखकर हनुमान एक पर्वत उखाड़ लाये और उन्होंने उसे गुफा के द्वार पर रख दिया। ८९ श्रीराम ने हनुमान से कहा कि जब तुम बिलंका जा ही रहे हो तो वहाँ समझ-बूझकर कार्य करना। ९० अच्छा ! कहकर हनुमान चरणों पर गिर पड़े। हे देव ! मैं जा रहा हूँ कहते हुए उन्होंने हाथ जोड़ लिये। ९१ श्रीराम ने कहा, हे भाई ! तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारी बुद्धि से यह बिलंका नष्ट हो जाय। ९२ हनुमान जी वहाँ से सीधे

एक मुख होइ तहुँ चळे हनुमान ।
बिलंकारे पहुँचिला पांच घड़ी दिन ॥ ९३ ॥
जउतिष जणाइला नृपति आगरे ।
होइब महेन्द्र बेळा सपत घड़ी रे ॥ ९४ ॥
शुणिण नृपति बेगे स्नाहान सारिला ।
देवाळये पशि देवतांकु पूजा कला ॥ ९५ ॥
चारि वेद पढ़ि दैत्य आहुति दिअइ ।
दोहरा गृहरे अग्नि शान्ति जे करइ ॥ ९६ ॥
कहुँ कहुँ छअ घड़ी हेला दिनकर ।
बाहार अबकाशरे बिजे नृपबर ॥ ९७ ॥
सहस्रे मुकुट मुण्डे बाँधिला दइत ।
दुइ सहस्र हातरे बाँधे बीरनेत ॥ ९८ ॥
अळंकार आभरण होइला राजन ।
वेश हेउ हेउ हेला सात घड़ी दिन ॥ ९९ ॥
क्षुधारे अनळ प्राय जळइ उदर ।
विकराळ मुरति धइला दैत्य बीर ॥ १०० ॥
कोप भरे द्विसहस्र लोचन बुलाइ ।
द्विसहस्र भुजकु से देलाक बढ़ाइ ॥ १०१ ॥
ताहा देखि दैत्य माने बेगे पळाइले ।
नृपतिर निकटरे केहि न रहिले ॥ १०२ ॥

चल दिये । बिलंका पहुँचते-पहुँचते पाँच घड़ी दिन निकल आया । ९३ ज्योतिषी ने राजा के समक्ष निवेदन किया कि सात घड़ी पर महेन्द्र वेला लगेगी । ९४ यह सुनकर राजा ने शीघ्र स्नान कर लिया । देवालय में प्रविष्ट होकर देवपूजन समाप्त किया । ९५ उसने चारों वेद पढ़कर आहुति दी और पूजागृह की अग्नि शान्त कर दी । ९६ कहते कहते छः घड़ी दिन चढ़ आया । राजेश्वर अवकाश पाकर बाहर निकल आया । ९७ दैत्य ने एक हज़ार शिर पर मुकुट और दो हज़ार भुजाओं में वीरनेत बाँध लिये । ९८ राजा के आभरण अलंकारों से सजते-सजाते सात घड़ी दिन चढ़ आया । ९९ भूख से उसका उदर अग्नि के समान जल रहा था । इसी समय बलवान दैत्य की आकृति विकराल हो गई । १०० बड़े क्रोध से उसने दो हज़ार नेत्रों को चलाते हुए दो हज़ार भुजाएँ प्रसारित कर दीं । १०१ इसे देखकर दैत्य लोग शीघ्रता

कर बढ़ाइण सेहि प्रतापी असुर ।
गिरि कन्दरस पशु धइला विस्तार ॥ १०३ ॥
गो ब्राह्मण आदि जेते पशु पक्षी जाति ।
सभिकि धइला होइ कोपानळ मुर्ति ॥ १०४ ॥
सिंह व्याघ्र मृग गण्डा गयळ एमान ।
बराण्डि धइला हस्ते असुर राजन ॥ १०५ ॥
यावे जूण परिजन्ते धइला असुर ।
यादि विस्तारिण ताहा करइ आहार ॥ १०६ ॥
जेते पशु पक्षी थिले बिलंका नगरे ।
हनु सहितरे सर्वे पशिले गर्भरे ॥ १०७ ॥
तेंदि सळखरु करे अण्डाळइ हनु ।
थळकूळ न पाइला अंजनार सुनु ॥ १०८ ॥
असुर उदर मध्ये जाइण मिळिला ।
अन्तनाड़ी खोजइ से पवनर बळा ॥ १०९ ॥
हातकु लागिला नाड़ी मेरु किळा प्राये ।
देखि चमत्कार हेला पवन तनये ॥ ११० ॥
विकळ होइण कान्दे पवन कुमर ।
केमन्ते असुर गर्भू होइबि बाहार ॥ १११ ॥

से भागने लगे। राजा के समीप कोई भी नहीं रह गया। १०२ यह प्रतापी असुर अपने हाथों को बढ़ाकर पर्वत-कन्दराओं से पशुओं को विस्तार से पकड़ने लगा। १०३ गऊ, ब्राह्मण, पशु-पक्षी आदि सभी जीव-जन्तुओं को कोपाग्नि से प्रज्वलित दैत्य ने पकड़ लिया। १०४ सिंह, व्याघ्र, मृग, गेंड़े, हाथी आदि सभी जीव-जन्तुओं को क्रोधाग्नि में जलते हुए असुरराज ने अपने चंगुल में फँसा लिया। उसने सौ योजन पर्यन्त सबको पकड़कर मुख फैला कर अपना आहार बना लिया। १०५-१०६ बिलंका नगर में जितने भी पशु-पक्षी थे, हनुमान के सहित सभी उसके गर्भ में घुस गये। १०७ गले के नीचे जाते ही हनुमान ऐंड़ाते नीचे की ओर सरकने लगे, किन्तु आंजनेय को कुछ भी थाह नहीं मिली। १०८ पवनपुत्र हनुमान असुर के पेट में पहुँचकर उसकी अँतड़ियाँ खोजने लगे। १०९ उनके हाथ में पड़ी आँत मेरुपर्वत के कीले के समान देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। ११० पवन-कुमार व्याकुल होकर रोने लगे। किस प्रकार असुर के पेट से बाहर निकलेंगे ? १११ उसका पेट अथाह सागर के समान और आँत की

अगाध समुद्र प्राये असुर उदर ।
अंत नाड़ी होइ अछि मेरु परकार ।। ११२ ।।
राम-राम बोलि उच्चे डाके हनुमान ।
आहे रघुनाथ निश्चे गला मो जीवन ।। ११३ ।।
रक्षा करे रक्षा कर हे कोदण्डधर ।
असुर गर्भरे जीर्ण हेला ए शरीर ।। ११४ ।।
जह्नुँ श्रीरामंकु उच्चे डाकिला मारुति ।
भकत बान्धव प्रभू जगतर पति ।। ११५ ।।
पर्वत कन्दरे थाइ जाणि लेक ताहा ।
रखिलि रखिलि कहि टेकिदेला बाहा ।। ११६ ।।

हनुमन्त ओ सहस्रशिरा रावण कथोपकथन एवं सप्तशिरा मंत्रीर हनुमान संगे युद्ध ओ मृत्यु

एथु अनन्तरे देवी पार्वती गो शुण ।
अपूर्व चरित ए बिलंका रामायण ।। १ ।।
राम-राम शब्द गर्भू उठे घन-घन ।
से शबद शुणि राजा डेरिला जे कान ।। २ ।।
गर्भकु निरीक्षि चाहिं भाळइ मनरे ।
राम राम शबद जे शुभुछि गर्भ रे ।। ३ ।।

नाड़ी सुमेरु पर्वत के समान थी । ११२ हनुमान जी उच्च स्वर से राम-राम चिल्लाने लगे । हे रघुनाथ जी ! मेरा जीवन निश्चय ही समाप्त हो गया । ११३ हे कोदण्डधारी ! रक्षा करो ! रक्षा करो ! यह शरीर असुर के पेट में पचा जा रहा है । ११४ जब मारुति ने ऊंचे स्वर से श्रीराम को आवाज़ दी, तब भक्तों के बन्धु जगत् के स्वामी श्रीराम पर्वत की गुफा में रहते हुए भी सब कुछ समझ गये और उन्होंने मत डरो, मत डरो, कहकर रक्षा का हाथ बढ़ा दिया । ११५-११६

हनुमान और सहस्रशिरा रावण-संवाद एवं हनुमान के साथ सप्तशिरा मंत्री का युद्ध तथा राम के हाथ से उसकी मृत्यु

हे देवी पार्वती ! इसके पश्चात् इस बिलंका रामायण का अद्भुत चरित्र सुनो । १ असुर के गर्भ से राम-राम का शब्द ज़ोर-ज़ोर से निकल रहा था । राजा ने उस शब्द पर कान लगाये । २ अपने

एक राम आसि मोते जुद्ध माँगुथिला ।
से राम कि एबे मोर गर्भरे पोशिला ॥ ४ ॥
देखिबा केमन्ते राम बोलिण बिचारि ।
पाटी बिस्तारिण सबु पकाए उद्‌गारि ॥ ५ ॥
जेते जीब जन्तु गिळिथिला दैत्य पति ।
सबु उद्‌गारिला सर्वे पड़िलेक क्षिति ॥ ६ ॥
गर्भरु बाहार होइ पड़े हनुमान ।
सहिकरे कपिमणि पाइला चेतन ॥ ७ ॥
देखण बसिला हनु राम नाम धरि ।
एहा देखि चमत्कार हेले दण्डधारी ॥ ८ ॥
हनुकु पचारे पुणि बिलंका राजन ।
केमन्ते जठरानळे नोहिलु तु जीर्ण ॥ ९ ॥
कह कह बानररे काहुँ तु अइलु ।
मोहर गर्भरे आसि किम्पाइँ पशिलु ॥ १० ॥
केउँ राज्ये घर तोर तू काहा कुमर ।
तोर पिता माता किए कार परिचार ॥ ११ ॥
शुणि हनुमन्त बोले शुणरे दइत ।
किष्किन्धारे घर मोर पवनर सुत ॥ १२ ॥

पेट की ओर निरीक्षण की दृष्टि डालकर उससे उठनेवाले राम-राम शब्द पर वह मन में विचार करने लगा। ३ एक राम आया था जो मुझसे युद्ध की याचना कर रहा था। क्या अब वही राम मेरे पेट में चला गया है ? ४ मैं देखूँ तो वह राम कैसा है ? यह विचार कर उसने अपना मुख खोल सब बमन कर दिया। ५ दैत्यराज ने जो भी जीव-जन्तु लील लिये थे उन सबको उसने पृथ्वी पर वमन कर दिया। ६ हनुमान गर्भ से बाहर आ गिरे। एक घड़ी में ही उन्हें चेत आ गया। ७ कपिश्रेष्ठ (हनुमान जी) राम-नाम लेते हुए उछलकर बैठ गए। यह देखकर असुरराज बड़े आश्चर्य में पड़ गया। ८ फिर बिलंकेश्वर ने हनुमान से प्रश्न किया कि कैसे तुम मेरी जठराग्नि में पचे नहीं ? ९ रे वानर ! बता तू कहाँ से आया है तथा किसलिए आकर मेरे पेट में घुस गया ? १० तेरा घर किस राज्य में है ? तू किसका पुत्र है ? तेरे माता-पिता कौन हैं और तू किसका सेवक है ? ११ यह सुनकर हनुमान ने कहा, अरे दैत्य ! सुन। किष्किन्धा में मेरा घर है और मैं पवन का पुत्र हूँ। १२ मेरा नाम हनुमन्त है और मैं श्रीराम का दास

हनुमन्त नाम मोर श्रीराम सेवक ।
स्वर्ग मर्त्य पाताळ मुँ जिणिपारे एक ।। १३ ।।
तोते मारिबाकु आसिथिले रघु साइँ ।
से प्रभुंकु खोजिबाकु आसिथिली मुहिं ।। १४ ।।
अयोगे पड़िलि मुहि तोहर गर्भरे ।
तेणु श्रीरामंकु सुमिरिलि हृदयरे ।। १५ ।।
शुणिण सहस्रशिरा हसिण बोइला ।
सिंह शशाप्राये मोते एकथा लागिला ।। १६ ।।
एहा शुणि पचारिला पवनर सुत ।
शुणिबा से कथा गोटि कह रे दइत ।। १७ ।।
बिलंका राजन बोले शुणरे बानर ।
दण्डका अरण्ये थिला एक सरोबर ।। १८ ।।
से बन मध्यरे छन्ति जेवे जेते प्राणी ।
निति आसि पिअन्ति से पोखरीरु पाणि ।। १९ ।।
एक दिन कर कथा शुण रे मर्कट ।
बइशाख मसिखरा होइछि निराट ।। २० ।।
त्रषारे आरत होइ एक शशा आसि ।
पाणि पिउअछि सेहि पोखरीरे पशि ।। २१ ।।

हूँ । मैं अकेले ही स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल को जीत सकता हूँ । १३ तुझे मारने के लिए रघुनाथ जी आए थे । उन्हीं प्रभु को खोजने के लिए मैं यहाँ आया था । १४ कुसमय में मैं तुम्हारे पेट में चला गया । इसी कारण हृदय में मैं राम-राम स्मरण करने लगा । १५ यह सुनकर सहस्रशिरा हँसते हुए बोला कि यह बात तो मुझे सिंह और खरगोश जैसी ही लग रही है । १६ यह सुनकर पवनपुत्र हनुमान ने कहा, अरे दैत्य ! बोल । यह कथा मैं भी तो सुनूँ । १७ बिलकेश्वर बोला, अरे वानर ! सुन । दण्डकारण्य में एक सरोवर था । १८ उस वन में जितने भी जीव-जन्तु थे वह सब नित्य उसी सरोवर में आकर पानी पीते थे । १९ अरे बन्दर ! एक दिन की बात सुन । वैशाख का महीना था । धूप बहुत ही प्रचण्ड थी । २० प्यास से व्याकुल होकर एक खरगोश आकर उसी तालाब में घुसकर पानी पीने लगा । २१ उसी जंगल में दुर्दान्त नाम का सिंह था । वह भी

दुर्दान्त नामरे सिंह थिला से बन रे।
तषारे आतुर होइ आसे अति खरे ॥ २२ ॥
देखिला से घाटे शशा पिउ अछि पाणि।
मने विचारिला मोते देखिले एक्षणि ॥ २३ ॥
जळपान न करिब पळाइब डरे।
सेहि पापे पड़िबि मुँ नरक कुण्डरे ॥ २४ ॥
एते भाळि आड़ होइ रहिला गुपते।
सेहि शशा गोटिपाणि पियिला निश्चिन्ते ॥ २५ ॥
पियि सारि उपरकु आसिबार बेळे।
पशुराज दुर्दान्तकु देखे बेनि डोळे ॥ २६ ॥
वृक्ष ओहाड़रे लुचि रहिअछि सेहि।
एहा देखि शशा कहे मने गर्व बहि ॥ २७ ॥
आरे सिंह लुचिलेकि छाड़ि देबि तोते।
आज तुहि पड़ि अछु काळजम हाते ॥ २८ ॥
जद्यपि मो पादे बुहि पशिबु शरण।
तेबे तोते छाड़ि देबि जिबु घेनि प्राण ॥ २९ ॥
शशा कथा शुणि सिंह हसि हसि बोले।
मुहिं छार काहिं सम हेबि तुम्भ तुले ॥ ३० ॥

तृषातुर होकर बड़े वेग से पानी पीने चल पड़ा। २२ उसने आकर देखा कि उसी घाट में एक खरगोश पानी पी रहा है। उसने मन में विचारा कि यह मुझे इस समय देखकर बिना पानी पीये डर से भाग जाएगा। मैं इस पाप से नरक का भागी बनूँगा। २३-२४ यह विचार कर वह आड़ में छिप गया। उस खरगोश ने निश्चिन्त होकर पानी पिया। २५ पानी पीकर उपर आते समय उसने पशुओं के राजा दुर्दान्त को अपने नेत्रों से देखा। २६ वह वृक्ष की आड़ में छिपा था। यह देखकर खरगोश ने मन में गर्व करते हुए कहा। २७ अरे सिंह! क्या छिपने से मैं तुझे छोड़ दूँगा। आज तुम यमराज के हाथ पड़ गए हो। २८ जब तुम मेरे चरणों की शरण ग्रहण करोगे तब मैं तुझे छोड़ दूँगा। तुम अपने प्राण लेकर जा सकोगे। २९ खरगोश की बात सुनकर, सिंह ने हँसते हुए कहा कि मैं तुच्छ तुम्हारी समता कैसे कर सकूँगा? ३० युद्ध में तुमसे सुमेरु पर्वत भी

मेरु गिरि हारि जिबे तुम्भंकु समरे।
तुम्भ सम बळवन्त नाहिं तिनिपुरे ॥ ३१ ॥
एबे तुम्भ पादे मुहिं पशिलि शरण।
आहे प्रभु दया करि दिअ प्राणदान ॥ ३२ ॥
मागुछि एतेकमात्र थाइ ए बनरे।
कहिब ए कथा सबु जन्तुंक आगरे ॥ ३३ ॥
समरे दुर्दान्त सिंह हारि गला मोते।
शरण पशिला भए मोर पाद गते ॥ ३४ ॥
एहा शुणि शशा तहुँ गला आनन्दरे।
विस्तारि कहिला सबु जन्तुंक आगरे ॥ ३५ ॥
एहा शुणि जन्तु माने उपहास कले।
पागल होइछि शशा मने बिचारिले ॥ ३६ ॥
शशा काहुँ सिंह संगे करिब समर।
मुक्ता फळ खाए जेहु मारि करीवर ॥ ३७ ॥
किबा याकु छाड़ि देले नीच ज्ञान करि।
छोट जाति होइ कहु अछि केउँ परि ॥ ३८ ॥
नर बानर मो संगे करिब समर।
चउद भुवन नाहिं जा समान वीर ॥ ३९ ॥

पराजित हो जाएगा। तीनों लोकों में तुम्हारे समान बलवान कोई नहीं है। ३१ मैं अभी आपके चरणों की शरण ग्रहण करता हूँ। हे स्वामी! आप दया करके प्राणदान दें। ३२ मैं इस वन में रहकर आपसे केवल इतनी याचना करता हूँ कि यह बात आप सभी जीव-जन्तुओं के सामने कह दें कि सिंह ने भयभीत होकर मेरे चरणों की शरण ग्रहण कर ली। ३३-३४ यह सुनकर खरगोश वहाँ से सानन्द चला गया। उसने सभी जन्तुओं से सारी बातें विस्तारपूर्वक कह दीं। ३५ यह सुनते ही सारे जन्तु उपहास करने लगे तथा मन में सोचने लगे कि यह खरगोश पागल हो गया है। ३६ क्या कहीं खरगोश सिंह के साथ युद्ध कर सकता है। जो (सिंह) श्रेष्ठ हाथियों को मार कर मुक्ता रूपी फल खाता है। ३७ या तो इसे तुच्छ समझकर छोड़ दिया होगा। यह छोटा होकर कैसी बातें कर रहा है। ३८ नर और वानर मेरे साथ युद्ध करेंगे। चौदह भुवनों में जिसके समान वीर नहीं है। ३९ ब्रह्मा नित्य मेरे द्वार पर आकर वेदपाठ करते हैं

बह्मा आसि वेद पढ़े मो दुआरे निति ।
सुरुज परि खटिआए पाशे शचीपति ॥ ४० ॥
देवतामानंकु मुहि बाँधइ पादरे ।
जम राजा बाड़ि ताटि खटे निरंतरे ॥ ४१ ॥
कुबेर देवता काचे मोहर बसन ।
मोते मारिबाकु तोर राम कि भाजन ॥ ४२ ॥
नीच जाहि बानररे बनस्तरे थाउ ।
बाड़ि बाड़ि बुलि फळ चोरि करि खाउ ॥ ४३ ॥
जातिरे बानर तोर ज्ञान अबा काहिं ।
ज्ञानी जन संगे जेणु तोर संग नाहिं ॥ ४४ ॥
एहा शुणि हनुमन्त हसिण बोइला ।
तु जाहा कहिलु मोर मनकु त गला ॥ ४५ ॥
श्रीराम प्रतिज्ञा अबा जाणिबतु काहुँ ।
परम विष्णु से राम रघुकुळ राहु ॥ ४६ ॥
असुर मारिण सेहु उश्वासिबे भार ।
निराकार विष्णु सेहि जाणरे पामर ॥ ४७ ॥
जेउँ वीर पर्शुराम गरब गंजिले ।
तुहि निश्चे शशा तुल्य हेबु तांक तुले ॥ ४८ ॥

तथा निकट ही शचीपति (इन्द्र) दास की भाँति सेवारत रहते हैं । ४० देवताओं को मैंने अपने पैरों से बाँध लिया है । यमराज निरंतर दण्ड लेकर चौकीदारी करते हैं । ४१ कुबेर मेरे वस्त्र साफ़ किया करता है । क्या तेरा राम मेरा बध करने का पात्र है ? ४२ अरे नीच जाति का बन्दर ! तू जंगल में ही रह । घर-घर बाड़ी-बाड़ी घूमकर चोरी करके फल खा । जाति का तू बन्दर है । तेरा ज्ञान कहाँ है ? लगता है तेरा संग कभी ज्ञानी पुरुषों से नहीं हुआ । ४३-४४ यह सुनकर हनुमान जी हँसते हुए बोले कि जो कुछ तूने कहा वह तो मेरे मन में समा गया । ४५ परन्तु श्रीराम की प्रतिज्ञा को तू कैसे जानेगा ? परम विष्णु वह राम रघुकुल में राहु के समान हैं । ४६ असुरों का वध करके वह ही भार उतारेंगे । अरे पामर ! तू उन्हें ही निराकार विष्णु समझ । ४७ जिन्होंने वीर परशुराम का गर्व तोड़ा है । उनकी समता में तू निश्चय ही खरगोश के समान है । ४८ उन्होंने शिव-धनुष

शिव धनु भांगि बिभा हेले बइदेही ।
बाळिकि मारिण सुग्रीवकु राज्य देइ ।। ४९ ।।
पर्वत बहिण बन्ध बान्धिले सागरे ।
स्वर्णमय लंकापुर ध्वंसकले शरे ।। ५० ।।
माइले रावण तार भाई कुम्भकर्ण ।
इन्द्रजित सहितरे जेते वीर गण ।। ५१ ।।
रावणकु बध करि कीरति रखिले ।
महासती जानकींक दुख निबारिले ।। ५२ ।।
शरण पशिले आसि वीर विभीषण ।
ताहाकु लंकारे राजा कले रामराण ।। ५३ ।।
संतोषे अमरवर देले ताकु पुणि ।
आवर ताहाकु देले मन्दोदरी राणी ।। ५४ ।।
एवे तोते मारिबाकु बिजे रघुवीर ।
अवश्य काटिबे तोर सहस्रेक शिर ।। ५५ ।।
मोते जेबे आज्ञा देइथाआन्ते श्रीराम ।
उपाड़ि नियन्ति तोर बिलंका भुवन ।। ५६ ।।
सहस्रे मुण्डकु मुहिं मोड़न्ति तोहर ।
आज्ञा न थिबारु छाड़ि देइ रे असुर ।। ५७ ।।

का खण्डन करके सीता से विवाह किया। बालि को मारकर सुग्रीव को राज्य दिया। ४९ पर्वतों को लेकर समुद्र में पुल बँधवाया तथा अपने बाणों से स्वर्णमयी लंका नगरी को ध्वंस कर डाला। ५० रावण को मारकर उसके भाई कुंभकर्ण तथा इन्द्रजित् सहित वीरगणों का वध कर डाला। रावण का संहार करके उन्होंने यश अर्जित किया और महासती सीता का दुःख दूर किया। ५१-५२ वीर विभीषण ने आकर शरण ग्रहण कर ली। महाराज राम ने उसे लंका का राजा बना दिया। ५३ फिर उसे प्रसन्न होकर अमरत्व का वर प्रदान किया तथा उसे महारानी मंदोदरी समर्पित कर दी। ५४ अब तुझे मारने के लिए रघुवीर उपस्थित हुए हैं। वह तेरे हजार शिरों को अवश्य ही काट डालेंगे। ५५ यदि श्रीराम ने मुझे आज्ञा दी होती तो मैं तेरे बिलंका भुवन को उखाड़ लेता। ५६ तेरे सहस्र शिरों को मैं मोड़ डालता। अरे असुर! आज्ञा न होने से मैंने तुझे छोड़ दिया। ५७

एहा शुणि हसि हसि बोले दैत्येश्वर ।
तोहर प्रतिज्ञा मुहिं जाणेरे वानर ॥ ५८ ॥
काहिं तोर रामकुरे देखाअनि मोते ।
रामकु देखिले मुहिं जिबिरे परते ॥ ५९ ॥
हनुमन्त बोइलारे शुण दुराचारी ।
जाहा खाइअछु ताहा पकानि उद्गारि ॥ ६० ॥
तोहर गर्भरे रहि अछन्ति श्रीराम ।
उद्गारिले देखिबु तु कौशल्या नन्दन ॥ ६१ ॥
शुणिण बिलंकापति हरष होइला ।
बदन बिस्तार करि सबु उद्गारिला ॥ ६२ ॥
देखिले पड़िले जीवजन्तु से जेतेक ।
गोरु बिप्र मृग व्याघ्र शूकर अनेक ॥ ६३ ॥
देखि हनुमन्त मने सुमेर समीर ।
भो तात स्वर्गरु तुम्भे सुधा वृष्टि कर ॥ ६४ ॥
दइतकु बोइले से अंजना नन्दन ।
आरे दैत्य तो गर्भरे नाहान्ति श्रीराम ॥ ६५ ॥
इन्द्रकु चिन्तिला मने मने हनु वीर ।
स्वर्गु सुधा वृष्टि कले देव सुनासीर ॥ ६६ ॥

यह सुनकर दैत्यराज ने हँसते हुए कहा कि अरे वानर ! मैं तेरी प्रतिज्ञा को समझ रहा हूँ । ५८ तेरा राम कहाँ है ? अरे तू उसे लाकर मुझे दिखा । उसे देखकर मैं समझ लूँगा । ५९ हनुमान ने कहा, अरे दुराचारी ! सुन । तूने जो कुछ भी खाया है उसे वमन कर दे । ६० श्रीराम तुम्हारे पेट में हैं । वमन करने पर कौशल्यानन्दन तुझे दिखाई पड़ेंगे । ६१ यह सुनकर बिलंकेश्वर प्रसन्न हो गया । उसने मुख फैलाकर सब कुछ वमन कर दिया । ६२ गऊ, विप्र, मृग, व्याघ्र, सुअर आदि अनेक जीव-जन्तु बाहर दिख पड़े । ६३ हनुमान ने मन में पवनदेव का स्मरण किया । उन्होंने अपने पिता से स्वर्ग से अमृत की वर्षा करने को कहा । ६४ आंजनेय ने दैत्य से कहा कि श्रीराम तेरे गर्भ में नहीं हैं । ६५ महावीर हनुमान ने मन ही मन इन्द्र का ध्यान किया । देवेन्द्र ने स्वर्ग से अमृत की वर्षा कर दी । ६६ जीवनदान पाकर सभी वहाँ से भाग गए । स्वर्ग में देवराज हनुमान

जीवन पाइण सर्वे गलेक पळाइ ।
हनुकु प्रशंसा कले स्वर्गे सुर साईं ॥ ६७ ॥
सेहि दिन उपवासे रहिला असुर ।
बरषे पुरिले पुणि करिब आहार ॥ ६८ ॥
अति दुःखे रहिला से सुधा कष्ट सहि ।
प्रचण्ड गिरिकि गला हनुमन्त डेइँ ॥ ६९ ॥
श्रीरामंक सन्निधिरे प्रवेश होइला ।
पर्वत गुहारु जाइँ पथर काढ़िला ॥ ७० ॥
देखे तहिं बसि शर सळखन्ति राम ।
पादतळे हनुमान कलाक प्रणाम ॥ ७१ ॥
देखि हरष होइले प्रभु रघुवीर ।
पचारिले कह बाबू दैत्य समाचार ॥ ७२ ॥
हनु बोले देव तुम्भ आज्ञारे मुँ गलि ।
से पापिष्ठ दइत्यर गर्भरे पशिलि ॥ ७३ ॥
देखिलि समुद्रप्राय ताहार उदर ।
स्थळ कुळ न पाइलि आहे चापधर ॥ ७४ ॥
आकुळ होइ तुम्भंकु सुमरन्ते मुहिं ।
उद्‌गारि असुर मोते पकाइला तहिं ॥ ७५ ॥
राम काहिं छन्ति बोलि पचारन्ते मोते ।
मुँ बोइलि अछन्ति से तोर गर्भ गते ॥ ७६ ॥

की प्रशंसा करने लगे । ६७ असुर को उसी दिन से उपवास पड़ गया । अब तो वर्ष पूर्ण होने पर ही भोजन करेगा । ६८ वह भूख के कष्ट को सहन करता हुआ बहुत दुखी हो गया । हनुमान जी उछलकर प्रचण्ड पर्वत को चले गए । ६९ श्रीराम के पास पहुँचकर उन्होंने पर्वत की गुफा से पत्थर हटा दिया । ७० उन्होंने श्रीराम को बैठे हुए बाणों को ठीक करते देखकर उनके चरणों में प्रणाम किया । ७१ प्रभु रघुवीर हनुमान को देखकर प्रसन्न हो गए तथा दैत्य के समाचार पूछने लगे । ७२ हनुमान बोले, हे देव ! आपकी आज्ञा से मैं गया और उस पापी दैत्य के पेट में घुस गया । ७३ मैंने सागर के समान उसका पेट देखा । हे चापधर ! मुझे उसकी थाह व किनारा नहीं मिल पाया । ७४ व्याकुल होकर आपका स्मरण करते हुए मुझे उस असुर ने वमन द्वारा बाहर निकाल फेंका । ७५ राम कहाँ हैं ? इस प्रकार मुझसे पूछने पर मैंने

जेते जेते जीवजन्तु दैत्य गिलिथिला ।
मोहर कुहन्ते सेहि सबु उद्‌गारिला ॥ ७७ ॥
मुहिं सुभरन्ते इन्द्र अमृत सिंचिले ।
चेतना पाइण सर्बु जीवे पळाइले ॥ ७८ ॥
एहा शुणि रघुनाथ हरष होइले ।
धन्य हनुमन्त बोलि बहु प्रशंशिले ॥ ७९ ॥
धन्यरे अंजना सुत पवन तनय ।
दुःख काळे तुहि मोते होइलु सहाय ॥ ८० ॥
एबे कि बिचार कह आहे हनुबीर ।
किपरि मरिब सेहि पापिष्ठ असुर ॥ ८१ ॥
मारुति बोइले शुण प्रभु रघुमणि ।
बिलंका भुवने छन्ति बहुत सइनी ॥ ८२ ॥
रथ गज अश्व पदातिक अप्रमित ।
महा बळिआर सेहि लक्षशिरा सुत ॥ ८३ ॥
शुणिण श्रीराम कले प्रतिज्ञा बहुत ।
बिलंकारे न रखिबि गोटिए दइत ॥ ८४ ॥
गुम्फारु बाहार होइ सन्ध्या सारि राम ।
प्रचण्ड पर्वत परे कलेक विश्राम ॥ ८५ ॥

कहा कि वह तेरे पेट में हैं। ७६ जितने भी जीव-जन्तु दैत्य निगल चुका था उन सबको मेरे कहने पर उसने वमन कर दिया। ७७ मेरे स्मरण करते ही इन्द्र ने अमृत का सिंचन कर दिया। चेत आने पर सभी जीव भाग गए। ७८ यह सुनकर रघुनाथ जी प्रसन्न हो गए तथा "धन्य है हनुमान" कह कर हनुमन्तलाल की बड़ी प्रशंसा की। ७९ हे आंजनेय ! धन्य हो। हे पवनपुत्र ! धन्य हो। दुःख के समय में तुम्हीं मेरे सहायक बने। ८० हे महावीर हनुमान ! अब क्या बिचार है ? कहो ! वह पापी असुर किस प्रकार मरेगा ? ८१ मारुति बोले, हे रघुकुल-मणि ! सुनिए। बिलंका नगर में बहुत सेना है। ८२ रथ, हाथी, घोड़े तथा अपरिमित पदाति सेना है। वह लक्षशिरा का पुत्र बहुत बलवान है। ८३ यह सुनकर श्रीराम ने बहुत प्रतिज्ञाएँ कीं कि बिलंका में एक भी दैत्य नहीं रखूँगा। ८४ गुफा से बाहर आकर श्रीराम ने संध्या समाप्त की और प्रचण्ड पर्वत पर विश्राम किया। ८५ वह

मरकत शिळापरे विजे कूले राम ।
फळ मूळ गुड़ा आणि देले हनुमान ॥ ८६ ॥
भुंजिण सन्तोष हेले कौशल्या कुमर ।
क्रोधे बिलंकाकु दृष्टि देले बारम्बार ॥ ८७ ॥
मारिबि दैत्यकु निश्चे प्रतिज्ञा रखिबि ।
सहस्रेक शिर तार काटि पकाइबि ॥ ८८ ॥
एहा कहि शिळापरे शोइले श्रीराम ।
पाद पद्म मंचाळइ अंजना नन्दन ॥ ८९ ॥
एथु अनन्तरे शुण देवी गो पार्वती ।
मंत्रीकि घेनिण भाळे बिलंका नृपति ॥ ९० ॥
बोइला वृत्तान्त शुण आहे मन्त्रीवर ।
हनुमन्त नामे कपि श्रीरामर चर ॥ ९१ ॥
आजि सेहि आसि मोर गर्भरे पशिला ।
राम राम बोलि मोर गर्भू डाक देला ॥ ९२ ॥
उद्गारि पकान्ते गर्भू पड़ि से बानर ।
पचारन्ते बोलइ मुँ श्रीरामर चार ॥ ९३ ॥
ए नग्रमध्यरे मंत्री श्रीराम अछइ ।
अकण्टक राज्य मोर कण्टक जे होइ ॥ ९४ ॥
खोजि मार मंत्री ताकु हेळा तु नकर ।
कालिर भितरे काटिपका तार शिर ॥ ९५ ॥

मरकत की शिला पर विराजमान हो गए तथा हनुमान जी ने फल-मूलादि ला दिए। ८६ भोजन करके कौशल्यानन्दन श्रीराम संतुष्ट हुए। वह बारम्बार कोपदृष्टि बिलंका के ऊपर डालने लगे। ८७ दैत्य का वध करके मैं निश्चय ही प्रतिज्ञा पूर्ण करूँगा और उसके सहस्र शीश काट के फेंक दूँगा। ८८ यह कहकर श्रीरामचन्द्र शिला पर सो गये और अंजनानन्दन चरण-कमलों को दबाने लगे। ८९ हे पार्वती ! इसके बाद का हाल सुनो ! बिलंकेश मंत्री के संग विचार-विमर्श करने लगा। ९० उसने कहा कि हे मंत्रीवर ! सुनो। हनुमन्त नाम वानर, जो श्रीराम का दूत था, आज आकर मेरे गर्भ में घुस गया और उसने मेरे पेट से ही राम-राम की टेर लगाई। ९१-९२ वमन करने पर वह वानर पेट से बाहर आ गया। पूछने पर वह बोला कि मैं श्रीराम का दूत हूँ। ९३ हे मंत्री ! श्रीराम इस नगर में ही हैं जो मेरे अकंटक राज्य में कण्टक हो गया है। ९४ हे मंत्री ! तुम

मंत्री बोले देव मोर बचन शुणन्तु ।
श्रीराम संगरे कळि गोळ न करन्तु ।। ९६ ।।
न भाँग मोहर बोल आहे नृपराण ।
चालन्तु श्रीराम पाद पशिबा शरण ।। ९७ ।।
राजा बोलइ भो मंत्री रामंकु डरिलु ।
क्षत्री भित्ति छाड़ि श्रीरामंकु भय कलु ।। ९८ ।।
जेबे भय कलु तुहि पश जा शरण ।
अधैर्य न कर मोते आहे मंत्रीराण ।। ९९ ।।
निश्चे कालि श्रीरामंकु मारिबइँ मुहिं ।
एते बोलि पहुड़िला बिलंका गोसाइँ ।। १०० ।।
रात्र पाहि गला उदे हेले दिवाकर ।
दुन्दुभि नादरे चमकिला सुरपुर ।। १०१ ।।
शत्रु उपद्रव जाणि बिलंका राजन ।
से दिन प्रभात कालुं उठिला बहन ।। १०२ ।।
नित्यकर्म सारि आस्थानकु बिजेकला ।
राउत माहुन्त वीर गणंकु राइला ।। १०३ ।।
पात्र मित्र मंत्रीगण हकारि पाशकु ।
शतशिरा पुत्र पुणि त्रिशिरा भाइकु ।। १०४ ।।

उसे खोज कर मार डालो। इसमें प्रमाद मत करो। कल तक उसका शिर काट कर फेंक दो। ९५ मंत्री ने कहा, हे देव! मेरी बात सुनिए। श्रीराम के साथ कलह और वैर आप न करें। ९६ हे नृप-शिरोमणि! आप मेरा बचन भंग न करें। चलें श्रीराम के चरण-शरण ग्रहण करें। ९७ राजा बोला, अरे मंत्री! राम से डर गए। क्षत्रिय-वृत्ति को त्यागकर श्रीराम से भय करने लगे। ९८ जब तुम भयभीत हो गए तो तुम्हीं जाकर चरण-शरण ग्रहण लो। हे श्रेष्ठ मंत्री! मुझे अधीर मत करो। ९९ मैं निश्चय ही कल श्रीराम का वध कर दूँगा। इतना कहकर बिलंकेश लेट गया। १०० रात बीत गई। सूर्य निकल आया। स्वर्गलोक दुन्दुभि के निनाद से चौंक पड़ा। १०१ शत्रुओं के उपद्रवों को समझकर बिलंकेश उस दिन बड़े सवेरे ही उठ बैठा। १०२ नित्यकर्म से निवृत्त होकर वह सिंहासन पर जा बैठा। उसने सेनापति मुख्य वीर योद्धाओं को बुलाया। सभासद, मित्र, मंत्री अपने पुत्र शतशिरा तथा भाई त्रिशिरा को भी पास में बुला लिया। १०३-१०४ बिलंकेश्वर

समस्तंकु चाहिं बोले बिलंका राजन ।
शत्रु उपद्रव हेला मोहर भुवन ।। १०५ ।।
श्रीराम नामरे एक वीर आसि अछि ।
ए अजय गढ़ मध्ये गुपुते रहिछि ।। १०६ ।।
ताकु देखिबाकु मन बळिछि मोहर ।
किए मोते मारि देबो राम धनुर्धर ।। १०७ ।।
एहा शुणि वीर माने प्रतिज्ञा करन्ति ।
मारिबि रामकु देव न कर तु भीति ।। १०८ ।।
एक जणकरे सेहि करिब बा किस ।
रथ गज नाहिं तार केबळ साहस ।। १०९ ।।
एथकु न कर भय आहे नृप मणि ।
आजि निश्चे श्रीरामकु मारि देबु आणि ।। ११० ।।
शुणिण नृपति बड़ हरष होइला ।
सैन्य सज कर बोलि मंत्रींकि कहिला ।। १११ ।।
बिजि घोष दाउण्ड जे टमक निशाण ।
बीर बाद्य शबद शुभइ घन-घन ।। ११२ ।।
राउत माहुन्त जे पाइक फरिकार ।
सैन्य सेनापति माने होइले बाहार ।। ११३ ।।
सात लक्ष रथ पाँच सहस्र पदाति ।
एगार सहस्र बाहारिले मत्त हस्ती ।। ११४ ।।

ने सबकी ओर निहारते हुए कहा कि मेरे नगर में शत्रु का उपद्रव मच गया है । १०५ श्रीराम नाम का एक वीर यहाँ आया हुआ है । इस दुर्जेय गढ़ में ही वह गुप्त रूप से रह रहा है । १०६ उसे देखने को मेरी इच्छा हो रही है । धनुर्धारी राम को मारकर कौन मुझे देगा ? १०७ यह सुनकर योद्धा प्रतिज्ञा करते हुए बोले, हे देव ! आप भय मत करें । हम राम को मारेंगे । १०८ वह अकेला क्या कर सकेगा । उसके पास न रथ है, न हाथी है, बस केवल साहस ही है । १०९ हे नृपमणि ! इसके लिए आप भय न करें । आज निश्चय ही हम श्रीराम को मार कर ला देंगे । ११० यह सुनकर राजा को बड़ी प्रसन्नता हुई । उसने मंत्री से सेना सजाने को कहा । १११ विजयघोष, तुरही, नगाड़े टमक निशान तथा जुझाऊ बाजों के घनघोर शब्द सुनाई पड़ने लगे । ११२ सैनिक, रथी, महारथी, दूत, फरीकार, धावक आदि वीर योद्धा सेनापति ससैन्य बाहर निकल पड़े । ११३ सात लाख रथ, पाँच हजार

तीनि लक्ष उदंत जे सहस्रेक छत्र ।
एक लक्ष मत्तगज अयुतेक रथ ॥ ११५ ॥
महा महा वीर माने होइले बाहार ।
हस्ते घेनि छन्ति शत मुषळ मुद्गर ॥ ११६ ॥
केहि केहि असिपत्र गुरुज सावेळि ।
शल्य कुन्त घेनि बाहारिले महाबली ॥ ११७ ॥
टमक निशाण शब्द शुभे धन-धन ।
प्रचण्ड पर्वते थाइ शुणिले श्रीराम ॥ ११८ ॥
उठिण हनुकु चाहिं बोइले सधीरे ।
टमकत शुभु अछि बिलंका देशरे ॥ ११९ ॥
आजि कि जुद्धकु अबा आसिब राजन ।
पर्वत उपरे उठि देख हनुमान ॥ १२० ॥
एते बोलि स्नान कले प्रभु रघुबीर ।
सन्ध्या आदि नित्यकर्म करिण सत्वर ॥ १२१ ॥
पितृ तरपण करि पर्वतरे बिजे ।
कोदण्ड आबर शर बेनि भुजे साजे ॥ १२२ ॥
फळमूळ भोजन करन्ति रघुबीर ।
पर्वत कुपरे चाहें पबन कुमर ॥ १२३ ॥

पैदल सेना तथा ग्यारह हजार मदमस्त हाथी निकल पड़े । ११४ तीन लाख युवा वीर, एक हजार छत्रधारी, एक लाख उन्मत्त गजराज, एक अयुत रथ तथा बड़े-बड़े वीर हाथों में सैकड़ों मूसल और मुग्दर लेकर निकल पड़े । ११५-११६ कोई तलवार, कोई गुर्ज, कोई भाला, कोई कँटीले अस्त्र तथा कोई कुन्त लेकर बलवान बाहर निकल पड़े । ११७ टमक निशान का घनघोर शब्द सुनाई दे रहा था । प्रचंड पर्वत से श्रीराम ने उसे सुना । ११८ उन्होंने उठकर हनुमान की ओर देखकर कहा कि बिलंका नगर में टमक बजता हुआ सुनाई दे रहा है । ११९ क्या राजा आज युद्ध हेतु आएगा ? हनुमान ! पर्वत के ऊपर जाकर देखो । १२० इतना कहकर रघुवीर ने स्नान किया और सन्ध्या आदि नित्यकर्म से शीघ्र ही निवृत्त हो गए । १२१ पितरों को तर्पण करके पर्वत पर जा विराजे । उनके दोनों हाथों में कोदण्ड तथा बाण सुसज्जित थे । १२२ राघव फल-मूलादि खाने लगे तथा पवनकुमार पर्वत के ऊपर से देखने लगे । १२३ बातों ही बातों में एक घड़ी दिन चढ़ आया । बिलंका